स्वर्गके रत्न।

(गुजराती भापासे अनुवादित।)

अनुवादक और प्रकाशक—
महावीर प्रसाद गहमरी।

"प्रम स्वर्गका रत्न है, ज्ञान स्वर्गका रत्न ह, कर्त्तव्य स्वर्गका रत्न है भ्रातृभाव स्वर्गका रत्न ह, समय स्वर्गका रत्न ह, स्वसुधार स्वर्गका रत्न है, सत्य धर्म स्वर्गका रत्न है आर महात्माओक जावनमे जाना साखना स्वर्गका रत्न है।"

(स्वर्गकी जिन्दगा।)

स्वर्गमाला कार्यालय
काशी।

बसन्त पंचमी सं० १९७०।

पहली बार १०००

अर्पण ।

श्रीयुत बाबू गोपालराम गहमरनिवासी
'जासूस' सम्पादककी सेवामें ।

भ्रातृवर !

आपका 'बेगऊर' सहोदर अपने नये उद्योगका यह पहला फूल आपके करकमलोंमें अर्पण करता है ।

अनुज—
महावीर ।

परिचय ।

बम्बईमे 'श्रीवेंकटेश्वर समाचार' की सेवा करते समय मुझे "स्वर्गनो खजानो" नामकी एक गुजराती भाषाकी पुस्तक पढ़नेको मिली । उसे पढ़ने पर मुझे बड़ा आनन्द मिला । मैने देखा कि उस पुस्तकमे ज्ञान, धर्म्म, भक्ति, प्रेम और लोकव्यवहारके उपदेश बड़ी ही सरस और रोचक भाषामे दिये गये है । पुस्तक नये भाव और नये ढङ्गमे लिखी गयी है । उस ढङ्गकी लच्छेदार भाषावाली उपदेशभरी पुस्तक हिन्दीमे मेरे देखनेमे नहीं आयी थी। इससे मेरा विचार हुआ कि इसका अनुवाद हिन्दी पाठकोंकी सेवामे भेंट करना चाहिये । परीक्षाके तौर पर मैने श्रीवेंकटेश्वर समाचारमे उसका एक एक उपदेश "स्वर्गका खजाना" नामसे देना आरम्भ किया। हिन्दी पाठकोंने उसे बहुत पसन्द किया और वे चिट्ठियो द्वारा उसे पुस्तकाकार देखनेकी रुचि प्रगट करने लगे। इधर मुझे उस पुस्तकके लेखक पण्डित अमृतलाल सुन्दरजी पढियार महोदयसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ जिनसे विदित हुआ कि इस ढङ्गकी उन्होंने वेदान्त की कई पुस्तके लिखी है तथा लिखते जाते है । तब मैने उनकी और कई पुस्तके मँगाकर पढी जिनमे मेरा आनन्द

उत्तरोत्तर बढ़ता गया और उन पुस्तकोंका हिन्दी भाषान्तर करनेका विचार दृढ़ हुआ। उसी विचारके अनुसार "स्वर्गनां रत्नो" नामक पुस्तकका अनुवाद "स्वर्गके रत्न" नामसे हिन्दी पाठकोंकी सेवामें पेश किया जाता है। इसमें क्या है यह बात मूल ग्रन्थकारकी नीचे लिखी भूमिकासे तथा पुस्तक पढ़नेसे विदित होगा। मै पण्डित अमृतलाल सुन्दरजी पढ़ियारको धन्यवाद देता हूं जिन्होंने हर्षपूर्वक अपनी इस पुस्तकका तथा और पुस्तकोंका अनुवाद करनेकी मुझे अनुमति दी है।

ग्रथकारने इस पुस्तकका परिचय देते हुए लिखा है—

"महात्मा लोग कहते है कि सर्वशक्तिमान महान ईश्वरके जीवनमे जीना और अनन्त सामर्थ्यके साथ एकता अनुभव करना मनुष्य जिन्दगीका मूल उद्देश्य है और ऐसा होनेसे ही मनुष्य जीवनकी सार्थकता है; इसलिये हमे भी इस लक्ष्यबिन्दु पर ध्यान रखकर अपनी जिन्दगी बितानी चाहिये और इस बातका प्रयत्न करना चाहिये कि यह ऊँचेसे ऊँचा उद्देश्य पूरा हो। इसके लिये ऐसा योग साधना चाहिये कि प्रभुके साथ एकता हो—प्रभुके साथ जीव जुड़ जाय। क्योंकि प्रभुने श्रीमद्भगवद्गीतामें कहा है कि सब साधनों में योग श्रेष्ठ है। प्रभु कहता है—

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

अ० ६ श्लो० ४६

हे अर्जुन! तप करनेवालोंसे भी योगी श्रेष्ठ है, ज्ञानियोंसे

भी योगी श्रेष्ठ है और कर्म्म करनेवालोंमे भी योगी श्रेष्ठ है। इसलिये तू योगी हो।

इस प्रकार अनन्त शक्तिके साथ जोड़ देनेवाले योगका प्रभु बखान करता है। ऐसा अनमोल योग साधनेके लिये पहले हमें योगका सच्चा स्वरूप जानना चाहिये। यह जाननेके लिये कुछ हठयोगियोंकी मदद लेने नहीं जाना पड़ता। इसके लिये भी गीतामें प्रभुने कहा है--

योगः कर्मसु कौशलम्।

अ० २ श्लो० ५०

'कर्म्म करनेमें कुशलता रखनेका नाम योग है।'

जिन्दगीका फर्ज पूरा करनेमें चतुराई रखने, कुदरतके नियमोंके अनुसार चलने और प्रभुके तालमें ताल, प्रभुके नादमें नाद तथा प्रभुके कदममें कदम मिलाकर प्रभुके प्रवाहमें पड़ जानेका नाम कर्म्ममें कुशलता है और उसीका दूसरा नाम योग है। इसलिये बुद्धि लगाकर, जिन्दगीके उद्देश्य समझ कर तथा तत्त्व समझ कर जिन्दगीके फर्ज बजाना योग ही है। यह योगका पहला लक्षण है।

अब योगका दूसरा लक्षण जानना चाहिये। इसके लिये भी गीतामें प्रभुने कहा है कि--

योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥

अ० २ श्लो० ४८

" हे धनंजय अर्थात् हे धनको जीतनेवाले ! हे धनकी परवा न करनेवाले ! योगमें रह कर अर्थात् प्रभुके साथ जुड़ कर विना आसक्ति रखे कर्म्म कर और काम सिद्ध हो या न हो तो भी उसमें समता रख। इस प्रकार समता रखनेका नाम योग कहलाता है।'

भाइयो ! प्रभुके साथ एकता करनेकी यह दूसरी कुंजी है। पहली कुंजी है कर्म्म करनेमें कुशलता और दूसरी कुंजी है भले बुरे मौकों पर—सुख दुःखमें समता रखना। इन दो कुंजियों को पकड़नेकी युक्ति इस पुस्तकमें बहुत विस्तारसे दलील दृष्टान्तों सहित समझायी है। इसको समझनेसे अन्दरका बहुत कुछ संशय मिट जाता है, हृदयके बहुतसे सद्गुण खिल उठते हैं, हृदयकी तहमें पड़ी हुई बहुतेरी उत्तम वृत्तियां जाग जाती हैं और इस दुनियाका व्यवहार सुधरता है तथा अन्तरात्माको शान्ति मिलती है। क्योंकि इसमें प्रभुप्रेम है, इसमें सत्य ज्ञान है, इसमें अपने कर्त्तव्यकी समझ है, इसमें भ्रातृभावका रसायन है, इसमें अमूल्य समयकी महत्ता बतायी है, इसमें महात्मा बननेके लिये अपना सुधार करनेका मंत्र है और इसमें साधारण धर्म्म तथा गूढ़ तत्त्व है। इन सब बातोंको महात्मा लोग स्वर्गके रत्न समझते हैं, इस लिये इस पुस्तकका नाम ' स्वर्गके रत्न ' रखा है।

एकके ऊपर एक चढ़ती हुई सीढ़ीवाले, क्रम क्रमसे बढ़ते हुए ज्ञानवाले भक्तिमार्गके एक हजार दृष्टान्तोंकी सात पुस्तकें लिखनेकी मेरी इच्छा है। उनमें यह चौथी पुस्तक है। पहली पुस्तक ' स्वर्गका

विमान' है। वह भक्तिमार्गकी पहली पुस्तक समान है; क्योंकि उसमें ऐसे छोटे छोटे मजेदार दृष्टान्त तथा सुन्दर भजन हैं जिनके पढ़नेमें बड़ा मन लगता है। उन दृष्टान्तोंको पढ़नेसे धर्म्म करनेकी जरूरत समझमें आती है तथा धर्म्म करनेका जी चाहता है और यह जाननेकी इच्छा होती है कि ईश्वर क्या है और ईश्वर कैसा होता है। यह इच्छा पूरी करनेके लिये 'स्वर्गकी कुंजी' दूसरी पुस्तक है। उसमें ईश्वरका स्वरूप बहुत विस्तारसे समझाया है तथा यह बात बहुत अच्छी तरह बतायी है कि प्रभुकी इच्छाके अधीन होनेकी कितनी बड़ी जरूरत है और धर्म्म पालनेसे क्या क्या लाभ होते हैं। इसके बाद 'स्वर्गका खजाना' भक्तिमार्गकी तीसरी पुस्तक है उसमें भक्तिकी जरूरत, संतके लक्षण, ईश्वरका स्वरूप, मनको वशमें रखनेके उपाय, प्रभुके लिये भक्तोंकी तड़फड़ाहट, भक्तिका सच्चा स्वरूप इत्यादि खुलासा करके समझाये हैं। इससे वह पुस्तक भक्तिमार्गकी तीसरी पोथी समान है। इसके बाद 'स्वर्गके रत्न' चौथी पुस्तक है। स्वर्गका विमान, स्वर्गकी कुंजी और स्वर्गका खजाना नामक तीनों पुस्तकोंसे स्वर्गके रत्नमें अधिक रहस्य है। इसके दृष्टान्त बड़े हैं, इसमें हर रोजके काममें आनेवाला धर्म्म बताया है और हर रोजके काम काजमें कुशलता रखने तथा अच्छे बुरे प्रसंगों पर समता रखनेकी कुंजियां बतायी हैं। इसलिये यह भक्तिमार्गकी चौथी पोथी है।

इन चारों पुस्तकोंकी लिखावटमें जैसे फर्क है और उतार

चढ़ाव हे वेसे ही इनके नामोंमें फर्क है। जैसे, हर एक अच्छे आदमीकी इच्छा स्वर्ग पानेकी होती है और **'स्वर्ग' माने महात्माओंका स्वीकार किया हुआ ऊंचेसे ऊंचे दरजेका सुख, स्वर्ग माने उस स्थितिमें रहना जिससे अन्तरात्माको तृप्ति हो और स्वर्ग माने प्रभुमय जीवन तथा स्वयं प्रभु। मेरे 'स्वर्ग' शब्दका यह अर्थ है।** स्वर्गको पानेके लिये छकडा बहली या घोडागाडी नही काम आती और इतनी कम तेजीसे चलनेपर वहा जल्द नहीं पहुँचा जा सकता। और स्वर्ग ऐसा अलौकिक विषय है कि वहां जल्दसे जल्द पहुंचना चाहिये। इससे वहा जानेके लिये 'स्वर्गका विमान' चाहिये। उस विमानमे बैठकर स्वर्गके द्वारतक पहुंच सकते है, परन्तु स्वर्गके अन्दर नही जा सकते। अंदर जानेके लिये ऐसी कुंजी चाहिये कि जिससे स्वर्गका द्वार खुले। इसलिये स्वर्गके विमानके बाद दूसरी पुस्तक 'स्वर्गकी कुंजी' है। स्वर्गके अन्दर दाखिल होने पर भी वहाका खजाना एकदम नही मिल जाता। जैसे किसीके घरमें जाइये तो वह सारा घर दिखाई दे सकता है पर वहाका खजाना नहीं दिखाई देता क्योंकि वह तो जमीन में गडा होता है, कुठलेमें मुंदा रहता है या सन्दूकमें बद रहता है; वैसे ही स्वर्गकी कुंजी पाकर स्वर्गमे दाखिल होनेसे कुछ स्वर्गका खजाना नहीं मिल जाता। उसको पानेके लिये तो 'स्वर्गका खजाना' चाहिये। अब खजानेमें भी अनेक चीजें होती है जैसे तांबा, चादी, सोना, हीरा, मोती, नोट, शेयर, पुराने दस्तावेज आदि। पर हमको इन सब चीजोंमे कुछ काम नही है। हमें तो इन सब चीजोंमेंसे खास चुने हुए

रत्न दरकार है । इससे स्वर्गका खजाना मिलनेके बाद 'स्वर्गके रत्न' की जरूरत है । इसलिये स्वर्गके खजानेके बाद यह स्वर्गके रत्नोंकी पुस्तक मै हरिजनोंकी सेवामें पेश करता हूं । इसके बादकी इसी किस्मकी दूसरी पुस्तकोंमे अधिक ऊंचे दरजेके, अधिक खूबीवाले, अधिक रोचक तथा परम कृपालु परमात्माके अधिक निकट पहुचानेवाले दृष्टान्त आवें और यह काम शीघ्रतासे हो—इसके लिये ईश्वरसे प्रार्थना करता हूं ।"

इस किस्मकी—भक्तिमार्गकी पुस्तकें गुजराती लोगोंको बहुत रुचती हैं । इसका सबूत यह है कि गुजराती में 'स्वर्गका विमान' के तीन संस्करण और 'स्वर्गकी कुंजी' के दो संस्करण निकलचुके हैं। मुझे आशा है कि हिन्दी में भी इस ढङ्गकी पुस्तकोका आदर होगा ।

काशी
वसन्तपंचमी १९७०

निवेदक—
महावीर प्रसाद गहमरी ।

स्तुति

नमस्ते सते सर्वलोकाश्रयाय,
नमस्ते चिते विश्वरूपात्मकाय।
नमोऽद्वैत तत्त्वाय मुक्तिप्रदाय,
नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय ॥ १ ॥

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं,
त्वमेकं जगत्कारणं विश्वरूपम्।
त्वमेकं जगत्कर्तृ पातृ प्रहर्तृ,
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥ २ ॥

भयानां भयं भीषणं भीषणानां,
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्।
महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकं,
परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम् ॥ ३ ॥

परेश प्रभो सर्वरूपाविनाशिन्,
अनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्य।
अचिन्त्याक्षर व्यापकाव्यक्त तत्त्वा,
जपाभासकाधीश पायादपायात् ॥ ४ ॥

त्वदेकं स्मरामस्त्वदेकं भजामः,
त्वदेकं जगत्साक्षिरूपं नमामः।
त्वदेकं विधानं निरालम्बमीशं,
भयाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥ ५ ॥

(स्तोत्र रत्नाकर।)

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ॥

॥ श्री ॥

स्वर्गके रत्न ।

१–अपने स्वभावको कावूमें रखनेके विषयमें ।

हमारी जिन्दगीका मुख्य उद्देश्य यह है कि हम अनन्त कालक मोक्षका सुख हासिल करें, हमेशाकी स्वतन्त्रता हासिल कर, अपनी आत्माका अमरत्व प्राप्त कर और किसी तरहका दुःख किसी तरहका पाप या किसी तरहका अफसोस हमारे मनमें न रहे। परम कृपालु परमात्माने यह सब करनेकी हमें पूरी पूरी शक्ति दी है। इस शक्तिको विकसित करनेका नाम धर्म है, इसका नाम कर्तव्य है, इसका नाम ड्यूटी है, इसका नाम फर्ज है और इसका नाम जिन्दगीकी सार्थकता है। इसलिये हमें यह जानना चाहिये कि ऐसी कौन सी कुंजी है जिससे यह सब हो सकता है। इसके लिये दुनिया भरके शास्त्र तथा महात्मा लोग कहते हैं कि—

अपने मनको कावूमें रखना धर्मका बड़ेसे बड़ा पाया है। पर मुश्किल यह है कि मन बहुत चंचल, बड़ा हठी और बहुत जोरावर होनेके कारण एकदम जीता नहीं जा सकता इससे मनको जीतनेके लिये पहले हमें अपने स्वभावको कावूमें रखना सीखना चाहिये। क्योंकि स्वभाव मन नहीं है, बल्कि मनके अन्दर अनेक प्रकारका स्वभाव हो सकता है, इसस

स्वभाव मनके मुकाबले बहुत छोटी चीज है और वह हमारी पड़ी हुई टेवों का परिणाम है। इसलिये अगर हम उसको दबा देना चाहें तो सहजमें दबा सकते हैं। पर स्वभावको कैसे बदलना चाहिये यह बात बहुत आदमी नहीं जानते। इसलिये स्वभावको काबूमें रखनेकी कुछ सीधी सादी और सहज युक्तियां जाननी चाहियें।

जब अपनी मरजीके अनुसार कर सकनेवाले बादशाह भी अपने स्वभावको काबूमें रखते हैं तब हम उनके सामने किस गिनती में है कि मिजाज करें?

महारानी विक्टोरिया लगभग दुनियाके तीसरे भाग पर राज्य करती थीं और इतनी बड़ी वैभववाली तथा अधिकारवाली थीं कि जो चाहे सो कर सकती थीं। इतना होनेपर भी वह हमेशा अपने स्वभावको काबूमें रखती थीं। बहुत वैभव, पूरी हुकूमत, भोग विलासका वेहद सामान और अनेक प्रकारके सुबीते-जिनके कारण मनुष्य मत्त होजाता है और आपेमें नहीं रहता वैसे सुबीते-रहने पर भी वह अपने स्वभावको विगड़ने नहीं देती थीं। इससे सम्राज्ञीकी हैसियतसे सारी दुनियामें उनके नामकी जितनी इज्जत है उससे भी अधिक इज्जत एक आदर्श सद्गुणी महारानीकी हैसियतसे है। और यह क्यों है? स्वभावको जीतनेसे। वह अपने स्वभावको कहां तक काबूमें रखती थीं यह जाननेके लिये उनके जीवनचरित्रका एक उदाहरण देते है।

एक वार महारानी विक्टोरियाको कहीं बाहर जाना था। जानेका वक्त हो गया था और आप तय्यार भी थीं. पर उनकी सेवामें रहनेवाली एक लेडी अबतक नहीं आयी थी; इससे वह उसकी बाट देखती थीं। बाट देखते देखते जब बहुत देर होगयी

और तौभी वह लेडी नहीं आयी तब महारानी गाडी में बैठी इतनेमें वह लेडी आ पहुँची । महारानी विक्टोरियाने उससे कहा कि तुम्हारी घडी जरा सुस्त है, इसलियेमें अपनी घड़ी तुम्हें इनाम देती हूं। यह कह कर उन्होंने अपनी घडी उस लेडीके हाथमें दी। इस बर्तावसे वह लेडी बहुत शरमायी और इसके बाद उसने तरत इस्तेफा दे दिया।

भाइयो और बहनो! इस बातसे हमको विचार करना चाहिये कि महारानी विक्टोरियाके बदले अगर दूसरा कोई राजा, हाकिम या दिमागी अमीर होता तो क्या करता? वह कैसा कडा वचन बोलता? और अपने मिजाजको कितना गरम कर देता? पर यह सब कुछ न करके महारानीने उलटे अपनी घडी इनाम दी। यह कितनी बडी लियाकतकी बात है जरा ख्याल तो कीजिये। क्या इससे हमको यह सोचनेका मौका नहीं मिलता कि जब महारानी विक्टोरिया जैसे आदमी भी अपने स्वभाव को जीतते हैं और अपना गुस्सा रोकते हैं तब हम उनके आगे किस गिनतीमें हैं? और तिसपर भी हम कितना गुस्सा करते हैं, कितना मिजाज करते हैं और नाहक कितने हैरान होते हैं यह तो जरा सोचिये। महारानी विक्टोरिया उस समय गुस्सा करतीं तो उस लेडीको सजा दे सकतीं, मौकूफ कर सकतीं, उसका अपमान कर सकतीं और कई तरहसे उसको हैरान कर सकतीं। पर याद रखना कि हम जिन पर गुस्सा करते हैं उनका कुछ भी नहीं करसकते और तौभी नाहक त्योरी बदलते हैं। इसलिये यों त्योरी बदलना और बात बातमें गुस्से हो जाना तथा मन बिगाडना कितना खराब है इसका तो जरा ख्याल कीजिये। अगर ऐसे दृष्टान्त नजरके सामने रहेंगे तो धीरे धीरे हम अपने

स्वभावको काबूमें रखना सीख सकेंगे। इसलिये एक और दृष्टान्त सुनने की मेहरबानी कीजिये।

२-एक बादशाहने अपने गुलामसे कहा कि मैं जब तेरे जैसा होऊं तब न तुझे सजा दूं ? पर इस वक्त तो मैं बादशाह हूं और तू गुलाम है।

बादशाह तैमूरलंग इतिहासमें बहुत प्रसिद्ध आदमी है। वह तातार मुल्कमें राज्य करता था और उसने कितने ही देश जीते थे। वह सन् १३९८ ईस्वीमें हिन्दुस्थान आया था और उसने दिल्लीको लूटा था। वह बादशाह एक पैरका लँगड़ा था, इससे लगड़ाते लँगड़ाते चलता था। यह देखकर बादशाहके एक गुलामको हंसी आयी और वह एक दूसरे गुलामके सामने बादशाहकी चालकी नकल उतारने लगा। बादशाह तैमूरलंगने यह देख लिया और वह गुलाम भी जान गया कि बादशाह ने देखा है। इससे गुलामके होश उड़ गये और वह मनमें सोचने लगा कि न जाने अब मेरी क्या दशा होगी। क्योंकि उस समय गुलामोंको मार डालना कोई बडी बात नहीं थी और उस समयके राजा भी कुछ बहुत सोच बिचार कर या कानूनके पाबन्द होकर काम नहीं करते थे, बल्कि उनकी मरजी ही कानून थी और उनका हुक्म ही कायदा था। इससे अगर तैमूरलंग चाहता तो उसी वक्त उस गुलामके टुकडे टुकडे करा सकता था या चाहे जैसी घातकी सजा कर सकता था। पर उसने अपने स्वभावको काबूमें रखकर और कुछ सजा न देकर उस गुलामसे कहा कि तू गुलाम है और मैं बादशाह हूं।

मे जब तेरे जैसा गुलाम बनूँ तब न तुझे सजा दूं ? पर नहीं, मै तेरे जैसा गुलाम नहीं बनूगा । मै बादशाह ही रहूगा और तझे माफ करूगा ।

बन्धुओ ! तैमूर बादशाहका यह दृष्टान्त हम यह सिखाता है कि जब हम दूसर आदमी पर गुस्सा करते है तब हम भी उसीके ऐसे बन जाते है और इस तरह सठके सामने सठ बननेमें क्या कुछ चतुराई है ? या कुछ बहादुरी है ? इसलिये और किसीपर गुस्सा करनेसे पहल हमें अपनी पोजीशनका विचार करना चाहिये । हम किस जातिके हैं, हमारा देश कौन सा है, हमारा क्या धर्म है, हम किस मावापके लडके हे, हम किन ऋषियोंके वशमें उत्पन्न हुए हे, हमारी क्या शिक्षा है, हमारा क्या दरजा है और हम जिस आदमी पर क्रोध कर रहे है वह कौन है और इस दुनियामें एसा क्या कसूर है कि जिसके लिये हम अपना मन बिगाडें इत्यादि बातें सोचनी चाहियें । क्योंकि मिजाज बिगाडने से मन बिगडता हैं और मनके बिगाडनेसे सर्वस्व बिगडता है, मन बिगाडनेसे हमपर शैतानकी सवारी हो जाती है, मन बिगाडनेसे हमारी आत्माका बल ढक जाता है, मन बिगाडनेसे धर्म ढीला हो जाता है, मन बिगाडनसे कर्त्तव्यमें चूक होजाती है और मन बिगाड़नेस हम ईश्वरसे विमुख होजाते है। इतना ही नहीं बल्कि मन बिगाडनेसे नरकमें जाना पड़ता है और बारबार जन्म लेना पडता है । याद रखना कि हम जो छोटी छोटी बातोंमें अपना स्वभाव बिगाडते है, अपना मिजाज बिगाडते हैं और अपनी भूलभरी टेवोंके अधीन रहते है इसीसे ऐसा खराबी होती है । ऐसा न होने देनेके लिये, अपने स्वभावको काबूमें रखनेके लिये इन बातोंका ख्याल रखना सीखिये कि हम कौन हैं,

हमारी कितनी इज्जत है और हमारा क्या कर्त्तव्य है । अगर तेमूर बादशाहकी तरह यह समझें कि हम बादशाह हैं और कसूर करनेवाला गुलाम है तो स्वभावको काबूमें रखनेमें बडी मदद मिलेगी । क्योंकि कसूर करने वाला आदमी चाहे जितना बडा हो पर जिस समय वह कसूर करता है उस समय वह अपने विकारोंका गुलाम ही होता है, इसलिये ऐसे गुलामके साथ हम भी गुलाम क्यों बनें? हमें तो बादशाह ही रहना चाहिये। इसीमें खूबी है, इसीका नाम धर्म है और इसीमें प्रभुकी प्रसन्नता है। इसवास्ते स्वभाव खोकर गुलामके साथ गुलाम न बनकर बादशाह रहना सीखिये । बादशाह रहना सीखिये ।

३–जो आदमी दूसरोंका मन रख सकता है वह दुनियाको जीत सकता है; पर जो आदमी अपने मनको वशमें कर सकता है वह परमेश्वरको जीत सकता है ।

स्वभावको काबूमें रखनेके विषयमें यह बात भी समझने लायक है कि जो दूसरोंका स्वभाव जीत सकता है वह दुनियामें बहुत बडी फतह पाता है और कितनी ही बातोंमें मनमानी कर लेता है । जैसे-जिस आदमीको राजा या सेठ साहूकारका मन रखना आता है उस आदमीकी उस राजा या सेठके यहां रसाई होजाती है, फिर वह जो चाहे सो फायदा उसकी मार्फत उठा लेता है । इसीतरह जिस विद्यार्थीको अपने मास्टरका मन रखने की टेव पड़ जाती है या जिसको यह हिम्मत आजाती है वह दूसरे विद्यार्थियोंकी अपेक्षा

मास्टरका अधिक प्यारा होजाता है, इससे सैकड़ों विद्यार्थियों पर कई तरहसे हुकूमत चला सकता है। जो स्त्री अपने पतिका मन रख सकती है वह चाहे और बातों में मामूली हो तौभी पतिकी प्यारी होजाती है और घरमें सबपर उसका अधिकार चलता है। इसीतरह जो चेला गुरुका स्वभाव जान लेता है और उसे उसके स्वभावके अधीन रहना आता है वह चेला गुरुके गुप्त भेद जान सकता है और इससे आगे जाकर नामी आदमी होसकता है। इस प्रकार दूसरोंका मन समझने और रखने-से दुनियामें आदमी बड़ा आदमी होसकता है और कितनी ही ऐसी कीमती चीजें हासिल कर सकता है जो और तरह नहीं मिल सकती। इसके सिवा प्रेम जैसी अनमोल वस्तु भी एक दूसरे-का मन रखनेसे धीरे धीरे बढ़ सकती है। याद रखना कि यह सब दूसरोंका मन रखनेवालोंको, दूसरोंका मन वशमें करनेवालोंको मिलता है। पर अगर अपना मन अपने वशमें रखा जाय तो इससे क्या लाभ होता है यह आप जानते हैं? इसके लिये सन्त लोग कहते हैं कि—

जो भक्त अपने मनको वशमें रख सकता है वह प्रभुको वश में कर सकता है। क्योंकि अपने स्वभावको काबूमें रखनेसे अपनी इन्द्रियां काबूमें आती जाती हैं; इन्द्रियोंके काबूमें आनेसे विषय भोगनेका लालच काबूमें आता जाता है; विषय भोगनेका लालच काबूमें आनेसे वासनाकी नयी नयी कोंपलें निकलनेमें रुकावट होती है, वासनाकी नयी नयी कोंपलोंका निकलना रुकनेसे मनमें संकल्प विकल्प होना रुकता है; मनमें संकल्प विकल्पका होना रुकनेसे मन वशमें होता जाता है; मनके वशमें होनेसे बुद्धि स्थिर होती जाती है; बुद्धिके स्थिर होनेसे एकाग्रता होती जाती है; एकाग्रता

होनेसे ध्यानकी दशा आती जाती है; ध्यानकी दशा मजबूत होनेसे सहज समाधिका आनन्द मिलने लगता है; इसके बाद आत्मसाक्षात्कार होता है और अन्तमें परमात्माका दर्शन होता है। फिर उसके साथ अभेदभावका अनुभव होता है जिससे ईश्वर जीता जासकता है। और अच्छी तरह समझ लीजिये कि यह सब मनको कावूमें रखनेसे धीरे धीरे होता है। इसलिये अगर दुनिया में बड़ा होना हो तो दूसरोंका मन वशमें करना सीखिये और अगर ईश्वरके साथ ऐक्य अनुभव करना हो तो अपने स्वभावको कावूमें रखना सीखिये। अपने स्वभावको कावूमें रखना सीखिये। क्योंकि यही सहज, सीधी, सुन्दर और सुनहली कुंजी है।

४—हम जैसे दूसरों पर अपना मिजाज बिगाड़ते हैं वैसे अगर हमपर ईश्वर अपना मिजाज बिगाड़े तो हमारा क्या हाल हो? इसका विचार आपने किसी दिन किया है?

इस दुनियाका यह कायदा है कि हमारे हर एक कर्मका फल ईश्वरकी तरफसे मिलता है। हम जैसा करते हैं वैसा पाते हैं, जैसा बोते हैं वैसा काटते हैं और जैसी भावना रखते हैं वैसे हम बन जाते हैं। यह सब प्रत्यक्ष रीतिसे या परोक्ष रीतिसे ईश्वरके नियमानुसार होता है; क्योंकि अच्छे बुरे सब तरहके कर्मोंका फल देनेवाला परमात्मा है और परमात्मा सर्वज्ञ है तथा सर्वशक्तिमान है; इससे कोई छोटीसे

छोटी घटना या छिपीसे छिपी बात भी उसके ध्यानके बाहर नहीं होसकती। और कुदरत का ऐसा नियम है कि जगतमे किसी कर्मका फल मिले बिना नहीं रहता। कर्म चाहे कितना ही छोटा हो पर उसका कुछ न कुछ फल तो होता ही है। ऐसा बाढिया नियम होनेसे हमें अपने हर एक कर्मका जवाब देना पडेगा । इसलिये याद रखना कि अगर हमने दूसरों पर अपना स्वभाव बिगाडा है, दूसरोंके सिर कलङ्क लगाया है या दूसरोंको सन्देहकी दृष्टिसे देखा है, दूसरों पर अपना मन बिगाड़ा है, दूसरोंके विषयमें बुरे विचार किये है, दूसरोंकी दिल्लगी उडायी है, दूसरोको ताने तिश्ने मारे हैं या दूसरों पर अपनी आंखें बिगाडी है, कान बिगाडे है, जीभ बिगाडी है और हाथ बिगाडे है तो इन सबके लिये योग्य अवसर पर हमें सजा मिलेगी, इसमें जरा भी शक नही है। और यह भी याद रखना कि सजा देनेवाला समर्थसे समर्थ, देवोका देव, भयका भय और कालका भी काल स्वयं परमात्मा है। इससे उसकी सजा कैसी भयंकर होगी यह तो जरा ख्याल कीजिये! क्योंकि जितना अधिक अधिकार होता है, जितना सूक्ष्म बल होता है और जितनी ऊंची सत्ता होती है उतनी ही सख्त उसकी सजा भी होती है जैसे—

बीरबलने अकबर बादशाहसे कहा था कि अगर कभी मै कोई कसूर करूं तो मेरा इन्साफ इस गांवके डोमोंसे कराइयगा। यह सुन कर बादशाह हंसा कि बड बडे हाकिमों और सेठ साहूकारोंको छोडकर तुम्हारा इन्साफ डोमसे कराया जाय इसका क्या कारण ? बीरबलने कहा कि डोमोंसे मेरा झगड़ा है इससे वे मुझपर बहुत नाराज है। वे मुझे कड़ी सजा देंगे जिससे मे फिर कोई कसूर नहीं करूंगा। हाकिम और सेठ

साहूकार तो मुझे अच्छी तरह पहचानते हैं और मेरे गुण दोष जानते है तथा उन्हें यह भी मालूम है कि मैं आपका कृपापात्र हूं; इससे वे मुझे कड़ी सजा नहीं देंगे जिससे फिर कसूर करनेका जी चाहेगा। इसलिये अगर मुझे सख्त सजा देनी हो तो डोमोंके पास मेरा इन्साफ करानेकी मेहरबानी करना। इसके वाद वीरवलसे कोई कसूर हुआ, तब वादशाह ने डोमोंको वुलाया और कहा कि वीरवल ने बहुत भारी कसूर किया है इसलिये तुम उसको सजा दो। यह सुनकर डोम बहुत खुश हुए और आपसमें कहने लगे कि आज यह हाथमें आया है! आज इसे खूब सजा देनी चाहिये। फिर एकने कहा कि इसपर तीन बीस कौड़ी दण्ड करो, दूसरेने कहा कि सात बीस कौड़ी दण्ड करो, तीसरा बोला कि नहीं इसपर ग्यारह बीस कौड़ी दण्ड करो। तब सब कहने लगे कि अरे भाई! यह क्या कहते हो? इतना दण्ड करोगे तो वेचारा मारा जायगा! अन्तमें सबने सलाह करके नौ बीस कौड़ी यानि १८० कौड़ी जुरमानेकी सजा दी और मन ही मन खुश होने लगे कि आज हमने वीरवलको पीस डाला है! अब फिर कभी यह हमलोगोंको नहीं छेड़ेगा। जुरमानेकी यह रकम सुनकर वादशाहको वड़ा ताज्जुव हुआ और वह वीरवलकी चतुराई पर खुश हुआ; क्योंकि अगर किसी अमीर उमरा या सेठ साहूकारको इसका इन्साफ सौंपा गया होता तो वह हजारों मोहरें दण्ड करता।

बड़ोंकी नजर बड़ी होती है, इससे बड़ोंका इनाम भी बड़ा होता है और बड़ोंकी सजा भी वड़ी होती है। पर गरीवोंकी सजा थोड़ी होती है और उनकी तरफसे मिलनेवाला बदला भी बहुत थोड़ा होता है। इसलिये थोड़े बदलेकी आशा न

रखकर फलकी इच्छा बिना कर्म करने और जिसकी तरफसे बहुत बड़ा बदला मिल सकता है उसको अपने कर्म अर्पण करनेके लिये शास्त्रका हुक्म है। इससे समझ लेना कि यह हुक्म हमें बड़ेसे बड़ा फल देनेके लिये ही है। क्योंकि अगर हम अपने कर्मोंके छोटे छोटे फल यहीं भोगलें तो फिर परमात्माकी तरफसे बड़ा इनाम नहीं मिल सकता। इसवास्ते परम दयालु परमात्माका बड़ा इनाम लेनेके लिये हमें निष्काम कर्म करना सीखना चाहिये। और जहां फलकी इच्छा ही नहीं रहेगी वहा फिर मिजाज बिगाड़नेकी जरूरत ही क्या होगी? दूसरे यह भी ध्यानमें रखना कि शक्ति जितनी कम है या मनुष्य जितना कमजोर है उतनी ही थोड़ी उसकी तरफसे होनेवाली सजा होती है और हम सब बहुत ही कमजोर हैं और बड़े ही बन्धनमें हैं। जैसे, हमें देश रोकता है, काल रोकता है, राज्यके कानून रोकते हैं, समाजके बंधन रोकते हैं, लोकलाज रोकती है, गांवके रिवाज रोकते हैं, जातिके बन्धन रोकते हैं, कुटुम्बकी रस्में रोकती हैं, नींद रोकती है, भूख रोकती है, जाड़ा, गरमी, बरसात वगैरह ऋतुओंके फेरफार रोकते हैं, मनकी टेव रोकती है, वहम रोकते हैं और इसीतरहके और कितने ही बन्धन रोकते हैं। किन्तु परम कृपालु परमात्माको इनमेंसे कोई भी नहीं रोक सकता। इससे जैसे एक बालक अपने कोमल हाथोंसे जितनी सजा दे सकता है उससे अधिक सख्त सजा पहलवान अपने मजबूत हाथोंसे दे सकता है वैसे ही आदमीकी सजासे समर्थ प्रभुकी सजा हजार गुनी बड़ी होसकती है। इसलिये अब विचार कीजिये कि दूसरोंके कसूरके लिये हम जैसे ऊपर मिजाज बिगाड़ते हैं और धैर्य छोड़ देते हैं वैसे ही हमारे कसूरके लिये अगर सर्वशक्तिमान ईश्वर

हमपर अपना मिजाज बिगाड़े तो हमारा क्या हाल हो। इस बात पर आपने किसी दिन विचार किया है? और यह कभी सोचा है कि उसकी सजा कितनी बड़ी होगी? ऐसा विचार करनेसे भी हम अपने स्वभावको काबूमें रखना सीख सकते हैं। इसलिये प्रभुके कोपका ख्याल करके दूसरों पर मिजाज बिगाड़नें से रुकना। मिजाज बिगाड़नेसे रुकना।
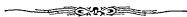
९–स्वभाव न बिगाड़नेका उपाय; किसीकी उलहनेकी चिट्ठी आयी हो तो उसको जवाब तुरत मत लिखिये।

स्वभावको काबूमें रखनेसे मन काबूमें रह सकता है और मनको काबूमें रखनेसे मोक्ष मिल सकता है; यह दुनिया-के हर एक शास्त्र और हर एक महात्माका सिद्धान्त है। इस लिये हमें अपने स्वभावको काबूमें रखनेके कुछ मोटे मोटे उपाय जान रखना चाहिये। इसके लिये कितने ही उपाय हैं और उन्हें जुदे जुदे विद्वानोंने जुदे जुदे ढङ्गसे बताया है। उनमें एक यह उपाय भी ध्यानमें रखने योग्य है कि जब हमें किसीकी तरफसे मेहना मिले तब बनसके तो उसी वक्त, तुरत ही उसका जवाब न दिया जाय और जब किसीकी, उलहने-की चिट्ठी आवे तब तुरतही उसका उत्तर न लिखा जाय; बल्कि विचार करनेके बाद और उलहनेकी गरमी उतर लेने पर उसका जवाब दिया या लिखा जाय। ऐसा करनेसे स्वभाव काबूमें रखा जा सकता है और इससे गुस्सा कम हो सकता है। क्योंकि जिस समय हमारे पास उलहने या मेहनेकी चिट्ठी

आती है उस समय वह चिट्ठी पढ़ कर उसके लिखनेवालेके गुस्सेका असर उस चिट्ठीकी मार्फत हममें आ जाता है। इससे उस समय हमारा मिजाज गरमा जाता है और हमारी विचारशक्ति एक तरफ झुक जाती है जिससे उस वक्त हम अच्छे बुरेका ठीक ठीक वजन नहीं कर सकते। और उस समय इस किस्मका एक जोश होता है कि उस जोशमें अपनी भूलें हमारी समझमें नहीं आतीं और विरुद्ध पक्षवालेका उद्देश्य हम नहीं समझ सकते। इसके सिवा उस समय गुस्सेकी गरमीमें उस चिट्ठी लिखनेवाले पर बहुत क्रोध आ जाता है इससे उसपर अन्याय करनेका हमारा जी चाहता है। क्योंकि उस समय हमारा मिजाज काबूमें नहीं रहता; इससे हमारी विचारशक्ति तथा विवेकबुद्धि दब जाती है। उस समय अगर हम उस व्यंगवाली चिट्ठीका जवाब देनेका तैयार हों तो उसमें अट्टका सट्ट लिखा जाता है जिससे परिणाममें हमारा नुकसान होता है तथा पश्चात्ताप होता है और कितनीही बार जीमें ऐसा ख्याल होता है कि ऐसा जवाब न दिया होता या न लिखा होता तो अच्छा होता। पर हाथसे तीर निकल जाने पर फिर वह पकडा नहीं जा सकता। इसी तरह जो शब्द मुँह से निकल गया या लिख गया वह फट या मिट नहीं सकता और पीछे उसका असर मिटानेका यत्न करें तोभी दाग तो रह ही जाता है। इसलिये मिजाजको ठिकाने रखना हो तो जल्दीमें कोई काम न कर डालना और उसमें भी जहां गुस्सेकी बात हो वहां तो विशेष सम्हाल रखना। इस तरह गुस्सेकी चिट्ठीका जवाब लिखनेमें देर करना या सजा देनेमें ठहरना भी अपने स्वभावको काबूमें रखनेका एक मजबूत उपाय है। इसलिये जिसे अपना सुधार करना

हो और अपनी आत्माका कल्याण करना हो उसे ऐसी सीधी सीधी, छोटी छोटी परन्तु अतिशय उपयोगी बातोंको भी ध्यान रखना चाहिये।

९–जैसा हमारा स्वभाव है वैसा ही स्वभाव सबका नहीं है, इससे मतभेद तो होगा ही। पर उसे बरदाश्त करना चाहिये।

स्वभावको काबूमे रखना सीखनेके लिये यह बात भी समझ लेना चाहिये कि जैसा हमारा स्वभाव है वैसा ही स्वभाव सब आदमियोंका नहीं होता। और हमें दुनियाके बहुत आदमियोंसे काम है। इस संसारकी रचना ही ऐसी है कि सब वस्तुएँ तथा सब आदमी एक दूसरेके आधार पर हैं। किसीका जीवन एकदम जुदा नहीं होता तथा दूसरोंकी मदद बिना किसीका जीवन नहीं टिक सकता। यह महा नियम होनेसे ऐसा हो ही नहीं सकता कि कोई एकदम अकेला रह सके। हम सबको एक दूसरे की मदद लेनी ही पड़ेगी। इस लिये तरह तरहके कितने ही आदमियोंसे साथ होगा तथा काम पड़ेगा और वे सब आदमी हमारे विचारोंसे सहमत नहीं होंगे, इससे मतभेद तो होगा ही। और उसमें यह भी स्पष्ट है कि हमारा विचार हमको जितना प्यारा लगता है, हर एक आदमीको अपना विचार उतना ही प्यारा लगता है; हमें जैसे अपनी चाल ढाल पसन्द है वैसे ही हर एक आदमीको अपनी चाल ढाल पसन्द है और जैसे हम अपने स्वभावको काबूमें नहीं

रख सकते वैसे ही दुनियाके दूसरे आदमी भी अपने स्वभावको काबूमें नहीं रख सकते, इससे मतभेदका मौका तो बार बार आवेगा ही। अगर हर मौकेपर हम अपना जी दुखाया करें तो फिर हमारा काम कैसे चलेगा? यह भी याद रखना कि कुछ हमारे लिये मनुष्य जातिका स्वभाव नहीं बदल सकता हमारे लिये सब आदमियोंके संकल्प विकल्प नहीं मिट सकता, हमारे लिये सब आदमियोंकी बुद्धिकी विचित्रता नहीं मिट सकती और न हमारे लिये ऋतुओं या वस्तुओंके गुण दोष ही बदल सकते हैं। यह सब विभिन्नता तो या बनी या रहेगी ही। इस विभिन्नताको देखकर अगर हम अपना स्वभाव बिगाड़ा करें तो फिर इसका फल क्या होगा? भाइयो! दुनिया बिना कांटे-की नहीं हो सकती। दुनियामें तो बबूल, बेर नागदमन, गोखरू, सेंहुड, सत्यानाशी आदिके कांटे रहेंगे ही। लेकिन हम अगर अपने पैरोंमें जूते पहन लें तो कांटे हमें नहीं गड़ेंगे। इसीतरह इस दुनियामें जुदी जुदी चीजोंके जुदे जुदे गुण दोष तो रहेंगे ही, जुदी जुदी ऋतुओंका जुदा जुदा असर तो होगा ही और जुदे जुदे आदमियोंका जुदा जुदा स्वभाव तो रहेगा ही ये सब हमारे लिये अभीतक अभी बदलनेके नहीं। परन्तु हमको जरा अधिक पोढ़ होना चाहिये, जरा अधिक मजबूत होना चाहिये और हम ऐसी मजबूती रखनी चाहिये कि ऐसे ऐसे कारणोंसे तथा ऐसे ऐसे मौकोंपर हमारा स्वभाव न बिगड़े। अगर इस प्रकार मनुष्यके स्वभावकी रचना तथा सृष्टिके क्रमकी रचना समझ ली जाय तो कितने ही तरहके दुःख और जोश आपसे आप घट जाय। क्योंकि ऐसा समझ लेनेसे हमको ऐसा लगता है कि यह सब चक्र हमसे बदलनेवाला नहीं है। कहां इतना बड़ा संसार और कहां हम? कहां अनेक आदमियोंके

जुदे जुदे विचार और कहां हमारा मतभेद ? इन सबके सामने हम अकेले क्या कर सकते हैं ; जगतकी लाखों चीज हमारे सामने नहीं झुक सकतीं। क्योंकि हमने अभी इतना बल हासिल नहीं किया है। इसलिये हमें ही उनके पास झुक जाना चाहिये और तभी हम सुखी हो सकते हैं ; यह सोचकर अपने मन तथा स्वभावको कावूमें रखना सीखना चाहिये। अगर ऐसा विचार नजरके सामने रहे तो धीरे धीरे मिजाजका रोकना आजाता है। इसलिये ऐसे उत्तम विचारको नजरके सामने रखनेकी कोशिश कीजिये। कोशिश कीजिये।

७–नये ढंगका तप।

अबतक बहुत लोग यह समझते हैं कि बहुत उपवास करनेका नाम तप है ; कोई यह समझता है कि जाड़ेमें सरदी सहना, चौमासेकी वर्षामें भीगना और गरमीमें सूर्यकी कड़कडाती धूप खाना तप है ; कोई यह समझता है कि रेतीमें गड जाने या पेड़पर औंधे लटकनेका नाम तप है ; कोई यह समझता है कि लोहेकी कीलोंपर सोने या रातको जागनेका नाम तप है ; कोई यह समझता है कि बालू फांकने, गोमूत्र पीने या राख घोलकर पीजाने अथवा गोबर खाकर रहनेका नाम तप है; कोई यह समझता है कि हजामत न बनवाने या नाखून न कटानेका नाम तप है; कोई यह समझता है कि पैदल चलने और तीर्थोंमें घूमा करनेका नाम तप है और कोई यह समझता है कि जिन्दगीके लिये जरूरी चीजें न लेने और विना कारण दुःख भोगा करनेका नाम तप है। इस प्रकार तपके

अधूरे और बुरे अर्थ लोगोंके मगजमें घुस गये हैं । पर सच्चा तप क्या है ? इसके लिये महात्मा लोग कहते हैं कि—

अपने अन्दर जो जो भूलें हों उनपर गुस्सा करने और उन भूलोंको अपनेमेंसे निकाल डालनेके लिये भीतरसे हलचल मचानेका नाम तप है । ऊपर लिखे सब तरहके तप करनेपर भी अपनी भूलोंसे लापरवाही हो तो उसका अच्छा परिणाम नहीं उतर सकता क्योंकि ऐसे ऐसे कितने ही तप करनेपर भी अपने स्वभावके दोष तो रहही जाते हैं । जैसे कितने ही आदमी उपवास करते हैं पर क्रोधको नहीं रोक सकते ; कितने ही आदमी तीर्थव्रत करते हैं पर लोभको नहीं सम्हाल सकते, कितने ही आदमी मौनव्रत धारण करते हैं और दाढ़ी मूंछ तथा नाखून बढ़ाते हैं पर अपने स्वभावको काबूमें नहीं रख सकते और कितने ही आदमी गोबर खाते तथा गोमूत्र पीते हैं पर अपनी बडी बड़ी भूलें भी नहीं देख सकते। और याद रखना कि जबतक अपनी भूलें न पकडी जायं और वे निकाल न दी जायं तबतक कोरे तपसे कुछ बहुत फायदा नहीं होता। इसलिये हमें सच्चा और सहज तप सीखना चाहिये और जो तप तुरत फल देसके वह तप करना चाहिये। क्योंकि हम देखते हैं कि जो लोग पुराने ढङ्गके तप करनेवाले हैं उनका हाल बेहाल है । उनके खानेका ठिकाना नहीं होता, उनके स्वभावका ठिकाना नहीं होता, उनकी देह तन्दुरुस्त और सुन्दर नहीं होती और उनके विचारोंमें कुछ तत्त्व नहीं होता। उल्टे, तप करनेसे वे म्लानमुख, रोगी और चिड़चिडे स्वभावके तथा सबके साथ झगडा करनेवाले बनजाते हैं। तप करनेसे मनुष्यमें जो तेज आना चाहिये, तप करनेसे तपस्वीमें जो शान्ति आनी चाहिये, तपके प्रभावसे जो सद्बुद्धि होनी चाहिये, तप करनेसे लोगोंका जो सात्विक

आकर्षण होना चाहिये और तप करनेसे तपस्वीके चेहरेपर जो एक प्रकारका दिव्य प्रकाश पड़ना चाहिये इनमेंसे कुछ भी हमारे आजकलके तपस्वियोंमें नहीं दिखाई देता; बल्कि इसके उल्टेही लक्षण दिखाई देते हैं। इसका कारण यह है कि तपके उपदेश या तपकी खूबी तथा तपकी विधिको वे ठीक ठीक नहीं जानते, इससे अनुचित रीतिसे तप करनेवालोंकी उल्टे दुर्दशा होती है। इसलिये हालके बुद्धिबलके जमानेमें ऐसे नकली तपमें न पड़े रहकर हमें अपना स्वभाव जीतनेका तप करना चाहिये और अपनेमें जितनी तरहकी छोटी बड़ी भूलें हों उन्हें ढूंढ़ ढूंढ़ कर निकाल डालनेमें अपनी शक्ति लगानी चाहिये। क्योंकि भूलोंको दूर करनेके लिये उनसे लड़नेका नाम सच्चा तप है और यह तप करने से तुरत ही बहुत बड़ा फायदा होता है। भूलोंसे लड़ने और उन्हें निकाल कर अन्तःकरणको स्वच्छ करनेसे आत्मिक शक्ति जाग उठती है। जब उत्तम ज्ञान मिला रहता है और जीव गूढ़तामें पहुंचा होता है तभी अपनी भूलें समझमें आती हैं और उन भूलोंको समझ लेनेके बाद निकालनेके लिये उन आसुरी वृत्तियोंके साथ दैवी वृत्तियोंको गहरी लड़ाई करनी पड़ती है। उस लड़ाईमें अगर फतह मिले तो उससे अनमोल लाभ होसकता है। इसलिये अपनी भूलें दूर करनेके लिये उनसे लड़नेका नाम सच्चा तप है। क्योंकि जो अपनी भूलोंपर गुस्सा करता है उसपर प्रभु गुस्सा नहीं करता। इसवास्ते भाइयो और बहनो! तुरत लाभ देनेवाला तप करना सीखिये। ऐसा तप करना सीखिये।

८—हम जैसे चोर और व्यभिचारी पर गुस्सा करते हैं वैसेही अपनेमें उठनेवाले विकारों पर गुस्सा करनेका नाम तप है।

बन्धुओ! जमाना बदल गया है, लोगोंके आचार विचार बदल गये हैं, लोगोंके शरीरके गठनमें फरबदल होगया है, हमारी खुराक तथा पोशाक बदल गयी है और हमारे धर्मसम्बन्धी विचार भी दिनदिन बदलते जाते हैं, इसलिये हमें तप करनेकी अपनी रीति भी सुधारनी चाहिये और उसमें भी जमानेके अनुसार फेर बदल करना चाहिये। क्योंकि ईश्वरकी कृपासे हालका जमाना अंधश्रद्धाका नहीं बल्कि बुद्धिबलका है, इसवास्ते अब नाहक देहको कष्ट देने और ऐसे कष्टको तप समझनेकी भूल करनेका वक्त नहीं है। बिना कारण मनमें झीखने और शास्त्रविरुद्ध रीतिसे देहको दुःख दियाकरनेका नाम तप नहीं है बल्कि धर्मके नियम समझकर शास्त्रके उद्देश्य समझकर तथा ईश्वरकी इच्छाएं और प्रेरणाएं जान कर उनके अनुसार चलने और उसमें कुछ भूल होती हो तो उस भूलको छोड़नेके लिये मनमें हलचल मचानेका नाम तप है। मतलब यह कि हम जैसे चोर पर गुस्सा करते हैं, जैसे व्यभिचारीपर गुस्सा करते हैं, जैसे हिंसा करनेवाले पर हमारे जीमें नफरत होती है, हम जैसे शराबियोंको फटकारते हैं और जैसे जुआड़ियोंकी सोहबतसे हम अलग रहना चाहते हैं वैसे ही हमारे मनमें जो जो बुरी वासनाएं उठें या जो जो बुरे विचार आवें उन सबका सामना करने उनपर गुस्सा करने और उन भूलोंको दूर भगानेके लिये अन्तःकरणमें एक तरह का हल्ला मचाने और उस हल्लेकी गरमीमें थोड़ी देर

तक मन और शरीरको तपने देनेका–इसप्रकार पश्चात्ताप करके पवित्र होनेका नाम तप है। जबतक इसप्रकारका तप करना न आवे, समझ बूझकर तप करना न आवे, शास्त्रको सामने रखकर तप करना न आवे और अपनी उन्नति करने योग्य तप करना न आवे तबतक खाली उपवास करनेसे, गोमूत्र पीनेसे, धूनी तापनेसे या बाल रखनेसे तप नहीं बढ़ता और ऐसे तपसे मोक्षका आनन्द नहीं मिल सकता। इसलिये भाइयो! और बहनो! अगर वैसा तप करना हो तो मनमें जब किसी तरहका खराब विचार उठे या किसी तरहकी पाप-वासना जगे उस समय उसे दूर करनेके लिये खूब जोर शोरसे हुल्लड़ मचाना। ऐसा करनेसे पापवासना मिटजायगी, ऐसा करनेसे अन्तःकरण पवित्र होगा, ऐसा करनेसे आगे बढ़नेका रास्ता मिलेगा, ऐसा करनेसे अन्तःकरणकी गहराईमें उतरना आवेगा, ऐसा करनेसे इस किसमके खराब विचारोंपर, बुरी वासनाओंपर धीरे धीरे अंकुश रखनेका बल आवेगा और ऐसा करनेसे कितने ही तरहके पाप बहुत आसानीसे आपसे आप घट जा सकेंगे। फिर स्वाभाविक तौरपर प्रभुके रास्तेमें चलना आजायगा। इससे अन्तमें कल्याण होगा। और जिस वक्त खराब विचारोंका सामना कीजियेगा उसी समयसे आपमें एकमें किस्मका बल आवेगा तथा एक तरहका कुदरती तेज आवेगा और याद रखना कि यह सब होनेका नाम ही तप है। इसलिये अब तो तुरत और प्रत्यक्ष फल देनेवाला पुरानेसे पुराना और नयेसे नया तप कीजिये। तप कीजिये।

९—निर्दोष चीजें बर्तनेमें कुछ अड़चल नहीं है; सिर्फ इतनी सम्हाल रखना जरूरी है कि वे बुरे तौरसे काममें न लायी जायं।

परम कृपालु परमात्माने जगतके जीवोंपर दया करके उनके सुखके लिये ही अनेक प्रकारकी चीजें बनायी हैं तथा उन सब चीजोंसे फायदा उठानेके लिये ही मनुष्योंको अनेक प्रकारकी वृत्तियां, शक्तियां और इन्द्रियां दी हैं; इतना ही नहीं बल्कि जगतकी अनेक चीजोंका लाभ पूर्णरूपसे लेने देनेके लिये मनुष्यके स्वभावकी रचना ही ऐसी की है कि वह किसी एक चीजसे तृप्त होता ही नहीं; बल्कि तरह तरहकी नयी नयी चीजोंकी कुदरती इच्छा हुआ करती है। क्योंकि जुदी जुदी चीजों, जुदे जुदे विचारों, जुदी जुदी इन्द्रियों, जुदी जुदी वृत्तियों और जुदी जुदी शक्तियोंके उपयोगसे और इन सबके अनुभवसे ही जीव आगे बढ़ सकता है। इसलिये जीवका अनुभव विशाल बनानेके लिये तथा यह साबित कर देनेके लिये ही, कि वस्तुओं और इन्द्रियोंके मोहमें अन्ततक पड़े रहना ठीक नहीं, अनेक वस्तुएँ तथा जुदी जुदी इन्द्रियाँ और उनमें महान शक्तियां हैं। इसकारण हर एक जीवको अपनी हैसियतके अनुसार जगतकी चीजों तथा इन्द्रियोंके विषयोंका आनन्द लेना चाहिये। पर इसमें शर्त इतनी है कि धर्मको सामने रख कर, कुदरतके नियम समझ कर, समाजके के नियम तथा राज्यके कानूनका मान रख कर और ईश्वरको हाजिर जान कर इन वस्तुओंसे लाभ उठाना चाहिये। अगर इस तरह लाभ उठाना आवे तो जगतमें ऐसी कोई चीज नहीं है जिससे आदमी अपवित्र हो। याद रखना कि वस्तुओंको

काममें लानेसे आदमीको पाप नहीं लगता बल्कि उनका बुरा उपयोग करने पर पाप लगता है । जैसे- प्रभुने हमें आंखे दी हैं तो इन आंखोंको बन्द रखनेकी कोई जरूरत नहीं है, आंखें मूंदकर चलनेके लिये कोई महात्मा या शास्त्र नहीं कहता; शास्त्र इतना ही कहता है कि आंखोंका दुरुपयोग न करो, यानी किसीके सामने खराब दृष्टिसे न देखो। और अपने फायदेके लिये इतना अंकुश रखना तो अच्छा ही है। जगतमें जितनी देखने लायक चीजें है उतनी न देखने लायक नहीं हैं । जैसे—सृष्टिसौन्दर्य देखना और उससे प्रभुकी महिमा समझना कुछ पाप नहीं है; उमड़ते हुए समुद्रकी लहरें देखना और उसमेंसे कुछ नवीनता मालूम करना भाग्य-शालिताकी निशानी है; दौड़ते हुए बादल देखना और उनमेंसे कुदरतका कुछ गुप्त भेद ढूंढ़ निकालना बड़े पुण्यका काम है; निर्दोष बालकोंको देखना और उनकी निर्दोषताका आनन्द अपनेमें लाना तथा उतनी देर बालकके समान अपने हृदय-को निर्दोष बनाये रखना एक तरहकी खूबी है; उगतेहुए सूर्यको देखना और उसके साथ खेलना तथा उसका प्रकाश अपने भीतर भरना बड़े आनन्दकी बात है; तरह तरहके अजायबघर देखना, तरह तरहके प्राणी देखना, किस्म किस्मके पेड़ पत्ते देखना, तरह तरहके आदमी देखना, आला दरजेके चित्र देखना और कुदरतकी विचित्रता देखना बड़े भाग्यकी बात है, क्योंकि इससे ईश्वरकी महिमा समझमें आती है, इससे हृदय विशाल होता है, इससे बुद्धि खिलती है, इससे अनुभव बढ़ता है और अन्तमें इन सबके पार जानेका मन करता है। इससे पीछे कल्याण होता है। और याद रखना कि यह सब देखनेकी इन्द्रियसे होता है तथा जगतकी चीजें

वर्तनेसे होता है। इसी प्रकार सब इन्द्रियों, सब शक्तियों तथा सब वृत्तियोंसे काम लेनेमें जीव जल्द जल्द आगे बढ़ सकता है। इसवास्ते याद रखना कि वस्तुओं तथा इन्द्रियोंका यथार्थ उपयोग करनेमें कुछ पाप नहीं है; परन्तु उनका दुरुपयोग करनेमें पाप है। इसलिये उनका उपयोग करनेसे मत डरिये परन्तु यह ख्याल रखिये कि उनका दुरुपयोग न हो।

१०-एक एक चीजके त्यागनेसे कुछ नहीं होता, मनके भीतरकी वासना त्यागनी चाहिये। तभी कल्याण होगा।

जिस आदमीको धर्ममय जीवन बिताना हो और जिसको प्रभुका प्यारा होना हो उसे धर्मके मुख्य मुख्य सिद्धान्त खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिये; क्योंकि धर्मके सिद्धान्त अच्छी तरह समझलेनेसे श्रद्धाभक्ति बढ़ती है, हृदयमें नये ढङ्गका बल आता है और धर्म पालनेमें उत्साह तथा दृढ़ता आती है। पर आजकल हमारे यहांके लोग धर्मके सिद्धान्त तथा उनका रहस्य समझनेकी बहुत परवा नहीं करते; इससे वे अपने आचरणमें ढीलेढाले होते हैं, अपना फर्ज पूरा करनेमें सुस्त होते हैं और पोलमपोलमें रहजाते है। क्योंकि धर्मके सिद्धान्तोंको वे अच्छी तरह समझेहुए नहीं होते; इससे चल आये हुए रिवाजोंके अनुसार करते है। लेकिन ये रिवाज कुछ नया बल या नया जीवन नहीं देसकते; हां सिद्धान्त और रहस्य नया बल तथा नया जीवन देसकते हैं; इससे अधिक जोरसे धर्म पाला जासकता है। इसलिये यथार्थ रीतिसे धर्म

पालनेके लिये धर्मके मुख्य मुख्य सिद्धान्तोंका असली स्वरूप थोड़में समझ लेना चाहिये। जैसे त्याग करना एक महान सिद्धान्त है क्योंकि त्याग बिना मोक्ष मिलता ही नहीं, यह दुनियाके हर एक शास्त्रका निर्विवाद मत है। इसलिये हमें त्याग करना सीखना चाहिये। त्यागके विषयमें यह बात है कि हम बाहरी चीजोंको त्याग करते हैं परन्तु मनके अन्दरसे त्याग करना हमें नहीं आता। जैसे– चौमासेमें निमिएकादशीके दिनसे कितनी ही (गुंजराती) स्त्रियां नियम करती हैं कि हम चौमासेमें भाजी नहीं खायंगी। बेशक वे अपना नियम पालती है और चार महीने भाजी नहीं खातीं। पर तौभी जब वे अच्छी भाजी आंखसे देखती हैं या हमारे "घर आज भाजी अच्छी बनी थी" यह बात किसीसे सुनती है तब भाजी खानेके लिये उनका मन चल जाता है; लेकिन सिर्फ नियमके कारण वे कुछ दिन नहीं खातीं। इसीतरह कोई सूरन आलू आदि कन्दका त्याग करती है; कोई मरसा मूली आदि सागका त्याग करती हैं, कोई नमक छोड़ देती हैं और तौभी वे रोज रोज शिकायत किया करती हैं कि नमक बिना भोजनमें स्वाद नहीं आता; कोई ईख चूसना छोड़देती हैं, कोई कुम्हड़ा नहीं खाती, कोई एक वक्त खाती है पर दूसरे वक्त खानेकी इच्छा हररोज मनमें रखती हैं, कोई हर रोज ब्राह्मणको सीधा देती हैं, पर इसतरह हर रोज सीधा देनेमें कितना अधिक आटा घी लगजाता है और कितना ज्यादा खर्च पड़ता है इसका हिसाब रोज रोज मनही मन किया करती हैं और दूसरोंसे इसका जिक्र भी करती हैं; कोई कोई नदी या समुद्रमें नहानेका नियम रखती हैं परन्तु धर्मके लिये नहानेसे एक प्रकारका जो महा आनन्द होना चाहिये, उसके बदले वे कांखती

कराहती हैं कि आज दरियामें नहानेसे सिर दर्द करता है या आने जानेसे बहुत थक गयीं इसलिये आज जल्द खाकर जल्द सो जाना है। देखो भाइयो! त्यागका यह फल! इसी तरहके दूसरे बड़े बड़े त्यागी हैं जिनमें इससे बढ़कर पोल होती है। जैसे- बापका एक घर छोड़ देते हैं पर वे कई मन्दिर बनवानेकी इच्छा रखते हैं; अपनी एक स्त्री छोड़ते हैं पर दूसरी कितनी ही स्त्रियोंसे लासालूसी लगाया करते हैं, अपने घरका थोड़ा पैसा छोड़ते हैं पर सारी जिन्दगी "एक पैसे का सवाल" कहके पाई पाई उगाहा करते हैं; इसीप्रकार और कई तरहसे बाहरी त्याग करनेपर भी दूसरी तरहसे लसफस लगाये ही रहते हैं। इसका कारण यह है कि यह सब जो त्याग है वह बाहर का है, अन्तःकरणका त्याग नहीं है। और याद रखना कि बाहरके त्यागसे कल्याण नहीं होता; इतना ही नहीं बल्कि अन्दरसे त्याग किये बिना बाहरका त्याग मिथ्याचार है, दिखाऊ है और यह एक तरह का ढोंग है, यह बात श्रीकृष्ण भगवानने गीतामें कही है। अफसोस! हम सब अबतक इस बाहरके त्यागमें ही पड़े हैं। पर याद रखना कि इस बाहरके त्यागसे कुछ सच्चा लाभ नहीं होता; क्योंकि हम देखते हैं कि, कितने ही आदमी धन त्यागते हैं पर भजन कहां करते हैं? कितने ही आदमी नेनुआ मूली या मरसा आलू त्यागते हैं पर अपना अहंकार कहां छोड़ते हैं? कितने ही आदमी व्रत उपवास करते हैं पर मनकी समता कहां रखते हैं? कितने ही आदमी धर्मकी कुछ बाहरी क्रियाएं करते हैं और इसके लिये थोड़ा बहुत समय तथा पैसा त्यागते हैं पर सबसे अभेदभाव कहां रखते हैं? इसप्रकार एक एक वस्तुके त्यागसे पूरा नहीं पड़नेका; क्योंकि किसी एक

वस्तुका त्याग करने पर भी और कितनी ही वस्तुएं त्यागने-को रह जाती हैं तथा जो वस्तु छोड़ी हो उसे भोगनेकी इच्छा भी मनमें रह जाती है। इसलिये बाहरके ऐसे ऊपरी त्यागसे कुछ असली फायदा नहीं होता। जब मनसे वासनाओंको छोड़ना आवे तब धीरे धीरे बाहरकी चीजोंका आपसे आप त्याग होता जाता है और यही सच्चा त्याग है। इसलिये मनके अन्दरसे वासनाओंको त्यागना सीखिये। वासनाओंको त्यागना सीखिये।

११-जो अपने अपराधको आप माफ नहीं करता उसका अपराध प्रभु माफ करताहै।

हमारे हर एक कर्मका कुछ न कुछ फल होता है; क्योंकि इस जगतमें बिना फलका कोई कर्म ही नहीं है। ऐसा नियम होनेसे, अच्छे कर्मका अच्छा फल और बुरे कर्मका बुरा फल तुरत या धीरे धीरे मिलता है, पर मिलता है जरूर! इसी तरह यह भी एक नियम है कि कोई आदमी कर्म किये बिना रह नहीं सकता; इससे जाने बेजाने, भावे कुभावे कुछ न कुछ अच्छा या बुरा काम सबसे हुआ ही करता है क्योंकि प्रकृतिका यह स्वभाव है कि वह बिना गतिके रह नहीं सकती। और इसमें यह बात भी समझने लायक है कि जीव अनेक जन्मोंसे मायाके जाल-में फंसा है और उसका इर्द गिर्द तथा संयोग अधिकतर बहुत कमजोर ही होते हैं; इतना ही नहीं बल्कि अच्छे संयोगको भी यह अपनी कल्पनासे कमजोर बना देता है; क्योंकि मनुष्यका मन नीचेकी तरफ झुकाहुआ है। ऊपरकी तरफ मन

बहुत खिलाहुआ नहीं होता, इनसे जैसे पानीका प्रवाह नीचेको ढलता है वैसही मन भी खराब चीजोंकी तरफ बहुत जल्द दौडजाता है । इसकारण आदमीसे जाने बेजाने कितनेही तरहके अपराध होजाते हे । और अपराधकी सजा भोगनी पडे इसमें तो कुछ आश्चर्य ही नहीं है। क्योंकि कर्मका कानून किसीको छोडनेवाला नहीं है । हम देखते हे कि इस जगतमे हम किसी आदमीका कुछ विगाडें तो उसकी सजा हम भोगनी पडती है । तब अगर हम सर्वशक्तिमान परमदयालु पवित्र पिता प्रभुका अपराध करें तो उसकी सजा मिले विना क्यो रहेगी ? और फिर यह भी विचार करना चाहिये कि जव आदमीकी दीहुई सजा भी वडी होती है-जैसे कि बत मारनेकी, कैद करनेकी, कालकोठरीमें बन्द रखनेकी, घरद्वार लूटलेनेकी और फांसीपर लटका देनेकी सजा होती है—तब यमदूतोंकी सजा कितनी भयकर होगी ? जरा ख्याल तो कीजिये ! क्या यह सजा भोगनी चाहिये ? नहीं इस भयकर सजासे बचना चाहिये तब अब यह सवाल है कि इस भयानक सजासे कैसे बच सकते है ? इसके लिये महात्मा लोग बहुत सहज रास्ता बताते हे और वह यही है कि जो अपने अपराधके लिये आप अपनी सजा करता है उसको उसके अपराधके लिय प्रभु सजा नहीं करता। पर यह बात बहुत लोग नहीं जानते कि आप अपनी सजा कैसे करनी चाहिये । इसक लिये हरिजन कहते हे कि जिस वक्त अपनेसे कोई भूल होजाय या मनम जब किसी तरहका खराब विचार आजाय तो तुरत ही उसके लिये सच्चे दिलसे पश्चाताप करना और जीवको फटकार बताना कि अरे मूर्ख ! अबतक तू इस किस्मकी भूल क्यों करता है ? ऐसी भयकर भूलसे तेरा क्या हाल होगा यह तो जरा विचार कर ! इस तरह जीवको

जगाना और सच्चे दिलसे समझाना तथा पश्चातापकी आग सुलगाना और उसमें आंसुओंकी आहुति देना तथा अपने शरीरको उस आगमें थोड़ा जला देना। इसका नाम आप अपनी सजा करना है। और जो भक्त अपने अपराधके लिये इसतरह अपनी सजा आप करते हैं उनको फिर उनके अपराधके लिये प्रभु सजा नहीं देता। और याद रखना कि प्रभुके सजा देनेसे आप अपनेको सजा देलेना बहुत मुलायम सजा है; क्योंकि यमराजकी सजा बड़ी कड़ी है। इसलिये अगर नरककी सजासे बचना हो तो अपनी भूलोंके लिये इसतरह आप अपनी सजा करना सीखिये। इससे सूलीका संकट सुईसे पट जायगा और आप अपने अपराधके लिये प्रभुकी भयंकर सजासे बच सकेंगे।

१२—बड़े बड़े हथियारोंसे और बुद्धिबलके अनेक उपायोंसे जो काम नहीं हो सकता वह काम प्रभुके नामका स्मरण करनेसे हो सकता है।

दुनियाके पुराने धर्मोंमें प्रभुके नामका स्मरण करनेपर बहुत जोर दिया है और उसमें भी हमारे देशमें तो इस विषय पर भिन्न भिन्न महात्माओंने बहुत ही ध्यान दिया है; क्योंकि श्रीकृष्ण भगवानने श्रीमद्भगवद्गीतामें कहा है—' यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि " अर्थात् सब तरहके यज्ञोंमें जपयज्ञ मैं हूं। प्रभुके इस प्रकार कबूल करनेसे अनेक भक्तों तथा लाखों ऋषियोंने प्रभुके नामका स्मरण करनेपर खास ध्यान दिया है और इसीमें

अपनी जिन्दगीका बड़ा भाग बिताया है। यह नहीं कि प्राचीन कालके भक्त ही जपयज्ञपर जोर देते थे बल्कि उनके बादके, हालके भक्तोंने भी प्रभुके नामस्मरणपर खास जोर दिया है और उसीके आधारपर अपनी जिन्दगी बितायी है। भक्तराज नरसिंह मेहता, तुकाराम, समर्थ रामदास स्वामी, महात्मा तुलसी दास, महात्मा नानक, कबीरदास, चैतन्यस्वामी, रामकृष्ण परमहंस तथा प्राचीन कालके ध्रुव, प्रल्हाद वगैरह महान भक्तोंने प्रभुके नामस्मरणमें ही अपनी जिन्दगी बितायी थी, इसीसे विजय पायीथी, इसीसे जगतको अपने पैरके सामने झुकाया था, इसीसे आत्माकी शान्ति हासिल की थी और इसीसे वे अन्तको प्रभुमें मिल गये थे। ये सब बातें नामस्मरणसे हो सकती हैं। नामस्मरणके बलसे तथा प्रभुके नामस्मरणमें मौजूद जादूकी शक्तिसे ये सब बातें बहुत आसानीसे और बहुत जल्द होसकती हैं। इसके सिवा नामस्मरण करनेमें बाहरी सामानकी कुछ विशेष मददकी जरूरत नहीं पड़ती। और यह सबसे हो सकता है; बूढ़ोंसे भी हो सकता है, स्त्रियोंसे भी हो सकता है, मूर्खोंसे भी हो सकता है, रोगियोंसे भी हो सकता है और हरदेशमें हर समय तथा हर दशामें नामस्मरण हो सकता है। ऐसा सहज धर्म या धर्मका ऐसा सहज साधन दुनियामें दूसरा कुछ नहीं है और उसमें भी आजकल कलियुगमें तो नामस्मरण बहुत ही जरूरी और मुख्य विषय है। क्योंकि आजकलके जमानेमें प्रजाके आचार विचार बदलगये हैं, लोगोंके शरीर कायम रखनेकी रीति भांति बदल गयी है, खुराक पोशाक बदल गयी है, राज्य बदल गया है, समृद्धि घट गयी है, और पेट भरनेके लिये सारा दिन तरह तरहकी झंझटोंमें बिताना पड़ता है तथा इसी तरह सारी जिन्दगी हाय हायमें ही गंवा देनीपड़ती है; इससे बाहरका धर्म,

बाहरका तप, बाहरका संन्यास, बाहरकी पूजाविधि, तीर्थ और इसी प्रकारके दूसरे बाहरी नियम आजकलके जमानेमें लोगोंसे नहीं होसकते और अगर कभी कोई यह सब पालनेके लिये मिहनत करे तौभी उसके लिये इर्दगिर्दकी जैसी चाहिये वैसी अनुकूलता न होनेसे यह काम ठीक ठीक नहीं होसकता; उसमें कुछ न कुछ कसर रह जाती है। इससे पहलेके महात्माओंने यह खास निर्णय कर दिया है और इस निर्णयको जुदे जुदे शास्त्रों द्वारा ढिंढोरा पिटवाकर प्रगट कर दिया है कि कलियुगमें प्रभुके नामस्मरणके समान और कोई ऊंचा धर्म नहीं है। और इसके सिवा दूसरे धर्म कलियुगमें ठीक ठीक निभ नहीं सकेंगे। उन्होंने यों साफ साफ कह दिया है। इसलिये हमें परम कृपालु परमात्माके नामका स्मरण करना सीखना चाहिये और सबसे सहज धर्म तथा सबसे आसानीसे होनेयोग्य धर्म पालनेकी कोशिश करनी चाहिये। क्योंकि प्रभुका नामस्मरण बहुत ही ऊंचा धर्म है और बुद्धिबलकी हजारों युक्तियोंसे तथा बड़े बड़े हथियारोंसे भी जो काम नहीं हो सकता वह काम नामस्मरणसे आसानीसे हो जाता है। पर अफसोस यह है कि यह सीधी, सादी, सहज और बढ़िया बात भी आज कलके जमानेमें कितनेही जवानोंकी समझमें नहीं आवेगी और वे कहेंगे कि प्रभुका नाम जपनेसे इतना बड़ा फायदा कैसे होगा? पर हम जितना समझते हैं उससे कहीं अधिक फायदा प्रभुके नामस्मरणसे हो सकता है और इसके कारण तथा विवरण अनेक भक्तोंके चरित्रमें बहुत मशहूर हैं. इससे सिर्फ श्रद्धाकी दृष्टिसे देखें तौभी वह समझमें आसकता है। पर अफसोस है कि बहुत लोग इसपर श्रद्धा भी नहीं रखते और बुद्धि भी नहीं लगाते और तिसपर भी सिर्फ अटकलपच्चू कहते हैं कि

प्रभुके नामस्मरणसे कुछ फायदा नहीं होता । इस किसमके आदमी जो जीमें आवे सो कहें वे अपने मनके मालिक हे । पर भावुक मनुष्योंको खूब समझ लेना चाहिये और अपने मनमें विश्वास जमा लेना चाहिये कि बड बडे हथियारोंसे और बहुत बुद्धि दौडानेसे भी जो काम नहीं हो सकता वह काम माला फेरनेसे हो जाता है । इसलिये प्रभुक नामका स्मरण करना सीखिये । प्रभुके नामका स्मरण करना सीखिये ।

१३–प्रभुका नामस्मरण करनेके लिये माला फेरनेमें कुछ दिक्कत नहीं है; पर तुम्हारे मनमें पाप भरा है इससे तुमको माला फेरनेमें दिक्कत मालूम देती है ।

प्रभुका नाम स्मरण करना आजकलके जमानेमें मुख्य धर्म है, इसपर बहुत लोगोंका विश्वास जमता जाता है, इससे वे माल फेरनेको सोचते हे और कितन ही पूजा पाठके वक्त या रातका सोते समय माला लेकर बैठने भी है; पर उनको मुश्किल यह है कि नामस्मरणमें उनका जी नहीं लगता: बल्कि उल्टे माला फेरनेमें उनको दिक्कत मालूम देती है । इससे वे झुंझलाते है और तरद्दुदके मारे माला छोड देते हैं, पर तौभी उनके मनमें हमेशा यह सवाल खडा रहता है कि महात्मा लोग मालाका इतना बखान करते हे और विश्वास दिलाते है कि प्रभुके नामस्मरणमें ही सर्वस्व है तब उसमें हम दिक्कत क्यों मालूम देती है? इस सवालका जवाब महात्मा लोग यह देते है

कि-मालामें तरद्दुद नहीं है बल्कि तुम्हारे हृदयमें पाप भरा है, इससे तुमको मालामें दिक्कत मालूम देती है । जरा विचार तो करो कि परम कृपालु परमात्माके महान पवित्र नाममें कुछ दिक्कत हो सकती है ? इस नाममें तो अजब तरहकी मिठास है, इस नाममें एक तरहका मीठा नशा है, इस नाममें एक तरहकी खासी खुमारी है, इस नाममें पापको जला देनेवाला जादू है, इस नाममें मनुष्यको देवता बनानेवाली कीमिया है, इस नाममें नयी जिन्दगी देनेवाला रसायन है, इस नाममें नयी रोशनी देनेवाला प्रकाश है, इस नाममें अनेक प्रकारकी ऋद्धि सिद्धि देनेवाली दैवी शक्ति है, इस नाममें जिन्दगी सुधार देनेवाली खूबी है, इस नाममें मायाको लात मारनेवाला बल है, इस नाममें देवताओंको वश करने और अद्भुत शक्तियोंको खींच लानेका तेज है, इस नाममें महात्मा बननेका उपाय है और इस नाममें शान्तिका समुद्र है । ये सब बातें कल्पित नहीं हैं और न सिर फिरेके जीके उद्गार हैं बल्कि ऐसी हैं जो अनेक भक्तोंके जीवनमें आज भी दिखाई देती हैं । इसलिये खूब समझ लो कि परम कृपालु परमात्माके पवित्र नाममें दिक्कत होती ही नहीं । लेकिन तुम्हारे मनमें पाप भरा है इसी कारणसे प्रभुके नाममें दिक्कत मालूम देती है । याद रखना कि तुम्हारे भीतर जो पाप भरा है और जिसके कारण माला फेरनेमें दिक्कत मालूम देती है उस पापको भी प्रभुका नामस्मरण भस्म कर देगा । इसलिये शुरूमें जरा दिक्कत मालूम दे तौभी निराश न होकर या हिम्मत न हारकर नामस्मरणमें लगे रहो । इससे तुम्हारा पाप घटता जायगा और इस घड़ी जो माला तुम्हें दिक्कत मालूम देती है वही माला आगे चलकर तुम्हें अतिशय आनन्द और अतिशय

शान्ति देगी। इसलिये उत्साहपूर्वक और प्रेमपूर्वक नामस्मरण किया करो। नामस्मरण किया करो।

१४–नामस्मरणका बल। वह मायाके राज्यके बदले, हममें प्रभुका राज्य स्थापित करता है।

भाइयो! धर्मका एक महान सिद्धान्त यह है कि हम जब मायाको जीतें तभी हमें मोक्ष मिलेगा। मुसलमान और ईसाई धर्ममें मायाको शैतान कहते हैं और उनधर्मोंके लोग भी यह मानते है कि शैतानको जीतनेसे ही स्वर्ग मिल सकता है। इस प्रकार दुनियाका हर एक धर्मवाला मायाको जीतनेके लिये कहताहै। माया एक प्रकारकी भूलभुलैयां है। उसके मोहमें आदमीसे अनेक प्रकारके अधर्म होजाते है, क्योंकि मायाका जाल ऐसा मजबूत है कि वह मामूली आदमीसे नहीं टूट सकता, मायाका जाल ऐसा अदृश्य है कि सीधे तौरपर साफ साफ नहीं दिखाई देता। मायाका जाल ऐसा अटपट है कि उसमें कुछ पता ही नहीं मिलता और मायाका जाल ऐसी मुश्किलों से भरा है कि उसमें बड़े बडे महात्मा भी कितनी ही बार गोता खागयेहै। ऐसी मुश्किल मायाका इस समय हमपर राज्य चलता है, इससे इस घडी हम मायाके गुलाम है और माया जैसे नचाती है वैसे हम नाचतेहैं। और आश्चर्य तो यह है कि ऐसा होनेपर भी हमको मालूम नहीं होता कि हम मायाके इशारेसे नाचते है! उल्टे हम यह समझते है कि हम जो कुछ करते हे वह सब वाजिब ही है और विचार विचार कर ही

करते हैं। ऐसा मालूम होनेसे मायाके पंजेसे छूटनेकी पूरी पूरी कोशिश भी हम नहीं करते। और शास्त्रका सिद्धान्त यह है कि जबतक माया न जीती जाय तबतक मोक्ष मिल ही नहीं सकता। इसलिये अब हमें विचार करना चाहिये कि माया कैसे जीती जा सकती है। इसका सहज रास्ता कौन सा है ? इसके जवाबमें हरिजन तथा भक्त कहते हैं कि—

प्रभुके नामका स्मरण करनेसे माया जीती जा सकती है; इतना ही नहीं बल्कि इस वक्त हमारे मनमें जो मायाका राज्य है उसके बदले प्रभुका नाम स्मरण करनेसे हममें प्रभुका राज्य हो सकता है। और विचार करो कि अपनेमें प्रभुका राज्य होना कितनी बड़ी बात है? कोई आदमी खराब राजाके राज्यमें नहीं रहना चाहता। पुरानी मुगलई, पुरानी गायकवाड़ी और पुरानी नवाबीमें रहना किसको पसन्द है? उसमें तो हर तरहकी खराबी ही है, उसमें तो हर घड़ी जिन्दगीको खतरा ही है और उसमें हरदम कुछ न कुछ आफतकी दहशत ही है। पर याद रखना कि इन सबसे भी मायाका राज्य-शैतानका राज्य बहुत खराब है। मुगलईमें तो किसी किसी आदमीपर अन्याय होता रहा होगा पर शैतानके राज्यमें-मायाके राज्यमें हर एक आदमीको बहुत कुछ झेलना पड़ता है और फिर भी उसे यह मालूम नहीं पड़ता कि हमारा इतना बडा नुकसान होता है। ऐसी विचित्र चालवाली और अजीब शक्तिवाली मायाका राज्य है, इसलिये उससे छूटनेका उपदेश दुनियाके सब महात्मा देते हैं। एक ओर जहां मायाका राज्य ऐसा खराब है वहां दूसरी ओर रामका राज्य-ईश्वरका राज्य कैसा अच्छा है यह तुम जानते हो? ईश्वरका राज्य! अहा! उसकी खूबीका क्या कहना है? ईश्वरके राज्यमें हर जगह आनन्द है, आनन्द ही आनन्द है; ईश्वरके

राज्यमें सदा शान्ति ही शान्ति रहती है; ईश्वरके राज्यमें हजारों सूर्यके समान ज्ञानका प्रकाश ही होता है; ईश्वरके राज्यमें प्रेमका महासागर ही उमड़ा करता है; ईश्वरके राज्यमें सर्वत्र सदा अभेदही रहता है; ईश्वरके राज्यमें हर तरफ सब बातोंमें फतेह ही फतेह होती है; ईश्वरके राज्यमें दया, परोपकार, क्षमा, न्याय, सत्य और सद्गुणोंके ही झरने बहा करते हैं और ईश्वरके राज्यमें आत्मा परमात्माका सम्बन्ध बहुत स्नेहवाला-बाप बेटेके सम्बन्ध जैसा होता है। और इसमें भी आगे बढ़ाजाय तो ईश्वरके राज्यमें सबके साथ तथा ईश्वरके साथ भी एकाकारका अनुभव होता है। ऐसा अलौकिक आनन्दवाला ईश्वरका राज्य है और हर घड़ी कोई न कोई भारी खराबी करनेवाला मायाका राज्य है। इसलिये मायाके राज्यसे निकलकर अब हमें ईश्वरके राज्यमें जाना चाहिये और ईश्वरके राज्यमें जाने तथ अपनेमें ईश्वरका राज्य स्थापित करनेका सबसे सहज उपाय यह है कि हमें परम कृपालु परमात्माके महा मंगलकारी नामका जप करना सीखना चाहिये। अगर यह आ जाय, इसकी चाट लगजाय और इसमें आनन्द आ जाय तो इससे ईश्वरका राज्य हो सकता है। इसलिये प्रभुके नामका स्मरण करके ईश्वरके राज्यमें आइये। ईश्वरके राज्यमें आइये।

१८—भगवान पापियोंकी प्रार्थना नहीं सुनता ; इसका कारण।

दुनियाके हर एक धर्मशास्त्रमें साफ साफ तौरपर बहुत जोर देकर यह कहा है कि अगर तुम्हें अपनी प्रार्थना मंजूर करानी हो

तो पहले पवित्र होकर पीछे प्रार्थना करो । क्योंकि पापी जब-तक पापी रहकर प्रार्थना करते हैं तबतक प्रभु उनकी प्रार्थना नहीं सुनता । इसका कारण यह है कि प्रार्थनामें हमेशा विशेष करके अपने स्वार्थकी बातें होती हैं और पापियोंका स्वार्थ बहुत ओछा होता है ; इससे अगर उनकी प्रार्थना मंजूर हो तो उल्टे पापमें उनका हौसला बढ़े और वे अधिक पाप करें । ऐसा न होने देनेके लिये प्रभु पापियोंकी प्रार्थना मंजूर नहीं करता । पवित्र मनुष्योंकी प्रार्थना प्रभु तुरत मंजूर करता है , क्योंकि जिस आदमीमें पवित्रता आजाती है उसकी इच्छाएं उसके अंकुशमें आजाती हैं ; जिस आदमीमें पवित्रता आजाती है उसके हृदय-की वृत्तियां बहुत ऊंची होजाती है; जिस आदमीमें पवित्रता आजाती है उसकी रहन सहन बदल जाती हैं; जिसमें पवित्रता आती है उसका मोह घट जाता है। जिसमें पवित्रता आती है उसके बहुतसे दुर्गुण नष्ट होजाते हैं और जिसमें पवित्रता आती है उसको ईश्वरका आशीर्वाद मिल जाता है। इससे उसमें अलौकिक बल आ जाता है जिससे उसमें अन्तःकरणकी गहराईमें उतरनेकी शक्ति आ जाती है । फिर वह अपनी वृत्तियोंको बहुत जल्द एकाग्र कर सकता है और पवित्र आदमी हृदयके तल-भागसे प्रार्थना कर सकता है । उसकी प्रार्थना परमार्थ दृष्टि-वाली होती है ; उसकी प्रार्थना खालिस होती है ; उसकी प्रार्थना प्रेमभाववाली होती है ; उसकी प्रार्थना योग्य समयकी तथा योग्य स्थानकी होती है और उसकी प्रार्थना उसका तथा जगतका भला करनेवाली तथा प्रभुको प्यारी लगनेवाली होती है । इसलिये ऐसे पवित्र मनुष्योंकी प्रार्थना बहुत जल्द मंजूर होती है । पर जो आदमी पापी होते हैं उनमें ऐसी कोई बात नहीं होती ; बल्कि सब उल्टा ही होता है । जैसे-पापियोंको अपने

अतःकरणकी गहराईमें उतरना नहीं आता ; पापियोंका प्रभुपर पूरा पूरा प्रेम नहीं होता और पापियोंकी प्रार्थनामें कोई ऊंचा उद्देश्य नहीं होता। पापियोंकी प्रार्थना सफल होनेसे दुनियाको कुछ लाभ नहीं होता बल्कि उलटे कितने ही जीवोंको कष्ट होता है। पापियोंका मन स्थिर नहीं रह सकता, पापियोंकी प्रार्थना प्रभुके पसन्द लायक नहीं होती और पापियोंके मनमें पापकी वासनाएं भरी होती हैं; इससे उनकी प्रार्थना मंजूर होनेसे उलटे उनको पाप करनेकी उत्तेजना मिलती है। पर न्यायी प्रभु ऐसा नहीं होने देना चाहता; इसीसे उनकी प्रार्थना मंजूर नहीं करता। इसलिये अगर आपको अपनी प्रार्थना परम कृपालु परमात्मासे मंजूर करानी हो तो पहले जैसे बने वैसे अधिकसे अधिक पवित्र बनिये, तब आपकी प्रार्थना तुरत मंजूर होगी। इसवास्ते अपनी प्रार्थना मंजूर करानेके लिये पवित्र बनिये। पवित्र बनिये।

१६—याद रखना कि दुःखके अन्दर भी कुछ न कुछ सुख रहता है।

हम सब दुःखका नाम सुनकर भड़का करते हैं और समझते हैं कि दुःख मानो भारीसे भारी खराबी है ; इससे दुःखके समय तथा दुःख आनेकी बात जानकर पहलेसे ही हम बहुत ढीले पड़ जाते हैं जिससे हमारी बहुत कुछ शक्ति इस भयके मारे बिना कारण ही गुम हो जाती है। कुछ शक्ति उस समय दब जाती है; कुछ उस समय भोथर हो जाती है और कुछ उस समय स्तब्ध हो जाती है। इससे हमारी योग्यता दब जाती है, हमारी होशियारीपर पानी फिर जाता है, हमारा अनुभव काममें नहीं

आ सकता और हमारा कुदरती बल टूट जाता है। इस कारण ऐन मौकेपर अधिक जोशसे, अधिक रुचिसे, अधिक बलसे तथा अधिक बुद्धि लडाकर काम करनेके बदले, दुःखके वक्त उलटे हम एकदम निकम्मे होजाते हैं और रही सही शक्ति भी गंवा देते हैं। ऐसा न होने देनेके लिये हमें दुःखका असली स्वरूप समझना चाहिये। इसके लिये महात्मा लोग कहते हैं कि–

दुःखके अन्दर भी बहुत कुछ सुख रहता है। पर दुःखके नामपर हमारे मनमें जो दहशत समा जाती है उसके कारण हमारी दृष्टिपर एक किसमका परदा पड़ जाता है जिससे दुःखमें मिलेहुए सुखको हम नहीं देख सकते। पर याद रखना कि कोई दुःख बिना सुखके होता ही नहीं, इतना ही नहीं बल्कि दुःख जितना बड़ा होता है उसके अन्दरका सुख भी उतना ही बड़ा होता है। परन्तु दुःखमेंसे सुखको अलग करना और दुःखको छोड़ कर सुखपर दृष्टि जमाना हमें नहीं आता; क्योंकि अभी हममें मलिनता है। इससे हम कव्वेकी तरह अच्छी चीज छोड़कर खराब चीजमें ही मन दौड़ाया करते है। परन्तु जो आदमी चतुर होते है, जो हरिजन होते हैं, जो अनुभवी होते है और जो महात्माओंका सत्संग किये हुए होते है उनकी दृष्टि हंसकी सी होती है। दूधमें पानी मिला हो तो उसमेंसे, हंस जैसे पानी छोड़ देता है और दूधको पी लेता है, वैसे ही चतुर आदमी मिलेहुए दुःख और सुखमेंसे दुःखको छोड़ देते है और सुखको पकड़ लेते है। इससे वे दुःखके वक्त भी धीरज रख सकते हैं, दुःखके समय भी ईश्वरका उपकार मान सकते हैं दुःखके समय भी शान्तिमें रह सकते है और दुःखके समय भी अपना फर्ज पूरा कर सकते है। क्योंकि उनकी आंखोंमें सुखको देखनेकी शक्ति मौजूद रहती है

और उनके हृदयमें दुःखका सामना करनेका बल आया रहता है तथा उनकी वृत्तियोंमें दुःख भोग लेनेकी सहन शक्ति आयी रहती है । इससे वे दुःखमें भी ईश्वरकी कृपा समझ लेते हैं और उसमेंसे भी ईश्वरका आशीर्वाद ले सकते हैं। उनके हृदयमें यह पक्का विश्वास रहता है कि इस घड़ी हमपर जो दुःख आ पड़ा है उस दुःखमें सुख जरूर मिला हुआ है; यह कुदरतका नियम है। इसलिये हमपर पड़े हुए दुःखमें भी किसी तरह का सुख है। तब उस सुखको छोड़कर दुःखमें क्यों पड़े रहें? यह ख्याल होनेसे वे अपने ऊपर पड़े हुए दुःखमें सुखको ढूँढ़ने लगते हैं और इस प्रकार बहुत समय तक सुखको ढूंढ़नेपर भी अगर अपनी समझमें कुछ नहीं आता तो वे किसी अनुभवी सन्तकी मदद लेते हैं। अनुभवी सन्त उनको समझा देते हैं। परन्तु उसमें भी कितनी ही बार ऐसा होता है कि सन्तकी बतायी हुई कितनी ही बातें उस समय उन्हें नहीं भातीं, सच्ची बातें होनेपर भी उस समय नहीं रुचतीं। क्योंकि लोग बड़े मोहवादी बन गये हैं और मायाके प्रदेशमें रमनेवाले हैं; इससे ईश्वरीतत्त्वकी खूबी तथा उसकी गूढ़ता उनकी समझमें नहीं आती। इस कारण दुःखमें मिले हुए सुखका जो अर्थ सन्त समझाते हैं वह अर्थ उस समय वे नहीं मान सकते। दूसरे जबतक सन्तोंसे उनका मन मिला हुआ न हो, उनपर उनकी पूरी श्रद्धा न हो और उनमें कोई खास अधिकार सन्तोंको न दिखाई दे तबतक वे कितनी ही गूढ़ बातें नहीं कहते। क्योंकि वे कहें तो उस समय उल्टे लोगोंको बुरा लग जाय या उनका कहना वे मानें ही नहीं। लोगोंकी उस समय ऐसी दशा होती है। इससे सन्तजन साफ नहीं कहते, बल्कि इशारेसे कहते, हैं। परन्तु दुःखके

वक्त लोगोंकी बुद्धि बिगड़ी हुई होती है इससे लोग उनके इशारेसे उनके कहनेका उद्देश्य नहीं समझ सकते।

जैसे—किसी लोभी परन्तु मालदार बूढ़े गृहस्थका जवान लड़का मर गया हो तो उस समय उससे कोई यह नहीं कहता कि बहुत अच्छा हुआ और वह भी यह नहीं समझ सकता कि इस दुःखमें भी कुछ सुख होगा। पर लड़का मर जानेसे उस गृहस्थका मोह दब जाता है और उसको ऐसा ख्याल होता है कि अब ये लाखों रुपये मेरे किस काम आवेंगे ? मेरे पीछे दूसरे लोग लूट खायंगे। इससे अपने ही हाथसे इसका लाभ उठा लेना चाहिये। यह सोच कर वह अपना धन परमार्थके काममें खर्चने लगता है; इससे उसकी कीर्त्ति बढ़ती है, उसको अच्छे साथी मिलते हैं और उसे गरीबोंका आशीर्वाद मिलता है; जिससे उसकी जिन्दगीका रूप बदल जाता है, उसके चेहरेका तेज बदल जाता है और दस वर्षमें वह बिलकुल नया आदमी बन जाता है तथा उसकी देखादेखी दूसरे कितने ही मनुष्य परमार्थ करना सीखते हैं। उन सबके पुण्यमें उसका कुछ कुछ हिस्सा होता है, इससे आगे जाकर वह बहुत शान्तिं पाता है। उसकी मौत भी सुधरती है और मरने पर वह उत्तम गति पाता है। अब विचार कीजिये कि अगर उसका लड़का जीता रहता तो क्या उस लोभीदासका इतना कल्याण हो सकता ? कभी नहीं। पर जब उसके सिर पुत्रमरणका दुःख पड़ा तभी वह सुधर सका।

अब दूसरा दृष्टान्त लीजिये। एक कम उमरकी स्त्री विधवा हुई; यह देखकर उस समय सब लोग बहुत अफसोस करने लगे, उसके माबाप कल्पान्त करने लगे और उस स्त्रीकी जो दशा हुई उसका तो कहना ही क्या ? प्रेममदमाती जवान

स्त्रीका प्यारा पति मर जाय तो उसे कितना दु:ख मालूम होता है यह और कौन कह सकता है? यह तो जिसपर बीता हो वही जाने। उस समय अगर कोई उस स्त्रीसे कहे कि ठीक हुआ तो क्या यह बात उसे रुचेगी? और ऐसा कहनेकी क्या साधारण लोगोंको हिम्मत होगी? पर कुछ दिन बाद उस स्त्रीकी वृत्तियां बदल जाती हैं। पतिका शोक करते करते थकजानेके बाद अन्तको उसके जीमें यह बात उठती है कि मौत तो किसीके इख्तियारकी बात नहीं है। जिन्दगी जैसी अनमोल चीजको दु:ख ही दु:खमें गंवानेसे बढ़कर दूसरा कोई पाप नहीं है। इसलिये अब हम अच्छी तरह चेतना चाहिये और कुछ शुभ काम करनेमें लग जाना चाहिये। यह सोचकर पहले वह अपना ज्ञान बढाने लगती है। फिर वह अपनी सहेलियोंके लिये ज्ञान हासिल करनेका सुबीता कर देती है। पीछे कुछ छोटी सेवाके छोटे छोटे काम करने लगती है। इसके बाद उसकी पहुच बढ़ती है, उसके मित्र बढते है, उसके उत्तम चरित्रपर लोगोंका विश्वास जमता है, इससे उसके हाथसे बडे बड परमार्थके काम होने लगते हैं और फिर वह अपनी बहनोंको सुधारनेके लिये सेवासदन जैसे आश्रम या अनाथालय चलाने लगती है और उसकी अधिष्ठात्री बनकर उसका सब इन्तजाम करती है। इतना ही नहीं बल्कि उसके ऐसे अच्छे कामोंके असरसे आगे जाकर इस तरहके और कितने ही आश्रम जगह जगह खुलने लगते हैं। अब विचार कीजिये कि वह स्त्री अगर अपने पतिके मोहमें ही पडी रहती तो क्या इतना बडा परमार्थ कर सकती? इतना बड़ा नाम तथा मान पा सकती? और इतनी अच्छी या ईश्वरकी प्यारी हो सकती? कहिये कि नहीं। पर ये सब बातें जब दु:ख पडता है उस घड़ी नहीं सूझती। इससे हम लोग दु:खमें जरूरतसे

ज्यादा दब जाते हैं। ऐसा न होने देनेके लिये यह समझना सीखिये कि दुःखमें भी सुख है।

अब तीसरा उदाहरण लीजिये। एक गरीब आदमीपर दूसरोंकी खटपटसे कुछ अन्याय हुआ। उसको उसके मालिकने नौकरीसे छुड़ा दिया। उस समय उसे बड़ा अफसोस हुआ और वह निराश हो गया कि अब मेरा कैसे चलेगा? ऐसी मंहगीमें मैं अपना गुजारा कैसे करूंगा? यह सोचकर वह बहुत अफसोस करने लगा। पर इसके बाद नौकरी ढूंढ़नेपर देशमें कहीं ठिकाना नहीं लगा, इससे वह बम्बई पहुंचा और वहांसे अफरीका जानेका मौका मिलनेपर उसने वहांकी नौकरी कबूल कर ली। पहली नौकरीमें २०) तलब थी इसमें ६०) हुई। तीन वर्ष बाद उसने खुद दुकान की। उसने पांच वर्षके अन्दर लाखों रुपये कमाये और वह बहुत बड़ा आदमी बन गया। अब देखिये कि वह अगर सिर्फ बीस रुपयेमें जहांका तहां पड़ा रहता तो उससे कुछ न होता। वह बेचारा जिन्दगी भर कंगालका कंगाल बना रहता और जबतक उसकी बीस रुपयेकी नौकरी बनी रहती तबतक वह अफरीका जानेका विचार न करता; लेकिन जब उसकी नौकरी छूटी तभी उसका वहां जानेका मन हुआ। इस प्रकार उसे बड़ा बनानेकी प्रभुकी इच्छा थी इसीसे उसने उसकी थोड़ी तलबकी छोटी नौकरी ले ली। पर उस समय भगवानका यह मतलब उसकी समझमें नहीं आया, इससे वह अफसोस करता था।

इसी प्रकार हर किस्मके दुःखमें कुछ ऊंचा उद्देश्य तथा सुख भरा होता है। पर उससे लाभ उठाना हमें नहीं आता इससे हम अफसोस किया करते हैं। इसलिये अब कृपा करके यह सिद्धान्त समझ लीजिये कि दुःखमें भी कुछ सुख मिला रहता

है। और दुःखको छोड़कर उसमें सुख ढूंढ़ना सीखिये। सुख ढूंढ़ना सीखिये।

१७-लोभियोंके बारेमें त्यागियोंके विचार।

दुनियाके हर एक धर्मका मुख्य सिद्धान्त यह है कि त्याग विना मोक्ष नहीं हो सकता। इसलिये अगर मोक्ष लेना है तो जगतकी मायिक वस्तुओंका त्याग किये विना नहीं बनेगा। इसके लिये बहुत जोर देकर प्राचीन ऋषियोंने शास्त्रोंमें यह कहा है कि संन्यास लिये बिना मोक्ष नहीं मिल सकता; बौद्धधर्ममें भी कहा है कि त्याग विना निर्वाण नहीं प्राप्त हो सकता; ईसाई धर्ममें भी कहा है कि सुईके छेदसे शायद ऊंट निकल जाय पर धनवान रहकर कोई स्वर्गमें नहीं जा सकेगा और मुसलमान धर्ममें भी कहा है कि खूब खैरात किये विना कोई खुदाकी खिदमतमें नहीं पहुँच सकेगा। इस प्रकार दुनियाके हर एक धर्ममें त्याग करनेको मुख्य बताया है। क्योंकि इस जगतमें जितने तरहके मोह हैं उनमें धनका मोह आदमीको बहुत बड़ा है और जबतक किसी तरहके मोहमें जीव फंसा रहे तबतक उसका उद्धार नहीं होता; यह जानी हुई बात है तथा समझमें आने योग्य बात है। इसलिये जो सच्चे हरिजन होते हैं वे त्यागपर बहुत ज्यादा जोर देते हैं। क्योंकि धनका त्याग करना या उसका मोह न रखना तथा थोड़ेमें चला लेना एक प्रकारकी करारी कसौटी है और अपनी खुशीसे तथा सच्ची समझसे ऐसा करना तो बहुत थोड़े ही आदमियोंसे हो सकता है। जहां अनेक

भक्त भी धनके मोहमें ही रह जाते हैं वहां बेचारे मोहवादी संसारियोंकी बात ही क्या कहना ?

अब विचार कीजिये कि जिस धनमें इतना बड़ा मोह है उस धनके लिये रातदिन तड़फड़ाने तथा अनेक प्रकारका ऊंच नीच करनेवाले धनवानोंकी कैसी नाजुक दशा होगी। क्योंकि जैसी सोहबत होती है वैसा असर होता है और जैसी भावना होती है वैसा फल होता है । इसलिये त्यागी जन कहते हैं कि जो लोग टकेके लिये रात दिन रोते हैं और समझते हैं कि "टका ही हमारा परमेश्वर है" तथा टकेका देन लेनेके मोकेपर भी सद्व्यवहार नहीं करते उनका हृदय, जैसे टका जड़ होता है, वैसे ही जड़ बन जाता है; टका जैसे ठंढा होता है वैसे ही उनका धर्म भी ठंढा हो जाता है, टका जैसे कठोर होता है उनका मन भी वैसे ही कठोर बन जाता है, टका जैसे कड़ा होता है उनकी वृत्तियां भी वैसी ही कड़ी हो जाती हैं; टका जैसे जल्द जल्द डगराता है वैसे ही उनके विचार भी जल्द जल्द बदल जाते हैं; टकेकी धातमें जैसे स्वाद मिला होता है वैसे ही टकेका बहुत मोह रखनेवाले आदमियोंके आचार विचार तथा रीति भांतिमें भी सड़ा स्वाद होता है; टका जैसे गोलमठोल होता है वैसे ही टकेवालोंके वचन तथा वादे भी गोलमठोल होते हैं और टका जैसे बहुत हाथोंमें फिरा करता है वैसे ही टकेवालोंके संकल्प विकल्प भी अनेक विषयोंमें फिरा करते हैं। अब विचार कीजिये कि इस किस्मके आदमियोंका कल्याण कैसे हो सकता है और ऐसे मोहवादी लोभी आदमी सच्चा धर्म कैसे पाल सकते हैं ?

भाइयो ! यह बात बताकर हम आपसे यह नहीं कहना चाहते कि टका न कमाइये या टकेकी परवा मत कीजिये या टकेकी कीमत मत समझिये और बिना करण टका फेंक देनेके लिये

भी हम नहीं कहते। आजकलके जमानेमें टकेके ऊपर ही सारा कारोबार है और टकेकी मददसे ही जिन्दगीकी जरूरी चीजें मिल सकती हैं। इसलिये टका बहुत जरूरी चीज है। तोभी उसके साथ यह बात भी समझ रखने योग्य है कि हमारे मर जानेपर यहीं रह जानेवाला टका हमारे किसी काम नहीं आता और अगर दूसरे धनवानोंसे कुछ कम टका अपने पास हो यानी जिन्दगीकी मुख्य जरूरत लायक टका हो तो उससे भी चल सकता है तथा टकेसे कई गुनी श्रेष्ठ कितनी ही कल्याणकारक चीजें इस दुनियामें हैं। उन सबकी बलि सिर्फ टकेके लिये न दी जाय इस बातका ख्याल रखना जरूरी है। दूसरी ओरसे यह भी स्मरण रखने योग्य है कि अगर टकेका सदुपयोग हो यानी उचित समयपर उचित परिमाणमें अगर टकेका त्याग हो तो उससे बहुत बड़ा पुण्य मिल सकता है। इसलिये जिस बातकी सम्हाल रखना है वह यह है कि ऐसे ऐसे अनमोल काम रह न जायं और हम केवल टकेके मोहमें ही न पड़े रहें। अगर जरूरतसे अधिक रकम पासमें हो तो ऐसा करना कि वह अच्छेसे अच्छे काममें खर्च हो। क्योंकि ऐसा करना कल्याणका रास्ता है और इससे प्रभु प्रसन्न होता है।

१८–जो आदमी सिर्फ पैसेके गुलाम होते हैं वे हृदयके सद्गुणोंके दरिद्र होते हैं।

मनुष्यको प्रभुकी तरफ ढालनेके लिये जो सबसे पहले जरूरी बात है वह यह कि उसका जगतकी मायिक वस्तुओंपरसे मोह घटाया जाय; क्योंकि जब यह मोह घटता है तब मन

उनमें भटकनेसे रुकता है और फिर किसी ऊंची वस्तुकी खोज करना चाहता है। पर जबतक जगतकी जड़ वस्तुओंमें उसको बहुत आनन्द मिला करता है तबतक वह ऊंची वस्तुओंकी तरफ नहीं जाना चाहता। इसलिये ऐसा करना चाहिये कि दुनियाकी बहुत मोहवाली चीजोंपर से उसका मोह घटे। पर यह बात कुछ सहज नहीं है। अगर आदमीके मनसे मोह घट जाय तो वह जो चाहे सो कर सकता है और थोड़े समयमें महात्मा बन सकता है। इससे हर एक कथा बांचनेवाला, कितने ही ग्रंथकार तथा सभी धर्मगुरु नाश होनेवाली चीजों-परसे मोह घटानेवाली बातें कहते हैं और आगे आनेवाले जमानेमें भी ये ही बातें लोग हेरफेर करके नये ढङ्गसे कहेंगे। पर तौभी हम देखते हैं कि आदमियोंका, धनके ऊपरसे, मोह नहीं घटता। और यह मोह जबतक न घटे तबतक उत्तम वस्तुओंकी तरफ बहुत जोरसे वे नहीं जा सकते। क्योंकि बाहरकी, दुनियादारीकी दौलत जिनके पास ज्यादा होती है वे हृदयके सद्गुणोंमें बहुत पीछे रह जाते हैं। जैसे दया, कोमलता, उदारता, क्षमा, सत्य, न्याय, इन्द्रियनिग्रह, तप, भजन, ध्यान, सत्संग, जप, शान्ति, सन्तोष, शास्त्रोंका अभ्यास, वाणीकी मिठास वगैरह अनेक विषयोंमें धनवान कंगाल रह जाते हैं। इसका कारण यह है कि उनकी दृष्टि सिर्फ पैसा पैदा करने और उसे जमा करनेकी तरफ ही रहती है और फिर पैसेसे जो जो खराबियां, बेवकूफी तथा कमजोरियां पैदा होती हैं उन्हींमें उनका ध्यान रहता है। इससे बाहरी दौलत होनेपर भी वे हृदयके सद्गुणोंके कंगाल रह जाते हैं। और यह नहीं कि कहीं कहीं यह बात होती है; बल्कि जो जो आदमी सिर्फ धनके गुलाम होते हैं वे सभी बहुत करके ऐसे ही होते हैं। इसीलिये बड़े बड़े

महात्मा धनकी कुछ कीमत नहीं समझते। क्योंकि सद्गुणोंको बढ़ानेमें द्रव्यका उपयोग करना चाहिये; उसके बदले सद्गुणोंको उल्टे दबानेमें धनका उपयोग होता है। इसलिये सच्चे भक्त धनसे डर कर चलते हैं और इसीसे धनका मोह कम करनेको कहते हैं। धन तरनेके लिये है न कि डूबनेके लिये। इसलिये इस बातका ख्याल रखना कि बाहरी दौलत बढ़ाकर उपाय रहतेहुए भी भीतरसे दरिद्र मत रह जाओ।

१९–दुनियामें जितने तरहके दुःख हैं उन सबको दूर करनेका सबसे सहज उपाय।

इस जगतमें अनेक तरहके दुःख हैं। जैसे–किसीको धनका दुःख है, किसीको अपमानका दुःख है, किसीको छोटे कुलका दुःख है, किसीको डाहका दुःख है, किसीको लड़का बाला न होनेका दुःख है, किसीको लड़केके बदचलन होनेका दुःख है, किसीको माबापके मर जानेका दुःख है, किसीको रोजगार धंधा न होनेका दुःख है, किसीको दुश्मनका दुःख है, किसीको हित मित्रके मरनेका दुःख है, किसीको अज्ञानताका दुःख है, किसीको शरीर तन्दुरुस्त न रहनेका दुःख है, किसीको बेमेल ब्याहका दुःख है और कितनी ही बातोंमें किसीको अपने मनमुताबिक न होनेका दुःख है। इस प्रकार जगतमें हर एक आदमीको किसी न किसी तरहका दुःख होता है और सब तरहके दुःखोंके लिये व्यावहारिक तौरपर अलग अलग उपाय होते हैं। जैसे–बीमारीका दुःख हो तो वैद्य या डाक्टरसे दवा करानेपर आराम होता है; अगर किसीसे तकरार हो गयी हो और अदालतमें जाना पड़ा हो

तो वकीलकी मददकी जरूरत पड़ती है ; अगर गरीबीका दुःख हो तो परदेश जानेसे फायदा होता है ; कुटुम्ब कलहका दुःख हो तो किसी चतुर आदमीको मध्यस्थ बनाकर थोड़ा बहुत गम खा जानेसे फायदा होता है और अगर दुश्मनका दुःख हो तो झुक जानेसे या माफी मांग लेनेसे फायदा होता है। इस प्रकार जुदे जुदे ढङ्गके दुःखोंके लिये जुदे जुदे उपाय करना कितने ही महात्माओंको पसन्द नहीं है। क्योंकि यह सब करनेका उनमें अभ्यास नहीं होता और न इतनी फुर्सत ही उनको होती है। इससे वे यह सोचते हैं कि ऐसी कुंजी हासिल करना चाहिये कि किसी एक ही उपायसे दुनियाके सब तरहके दुःख मिट जायं।

क्या यह बात सम्भव है कि दुनियाके सब तरहके दुःख एक ही उपायसे मिट जायं ? इसके जवाबमें महात्मा तथा आगे बढ़ेहुए हरिजन और भक्त कहते हैं कि हां, ऐसा हो सकता है। हो सकता है क्या हर एक देशमें हर समय हर कौममें तथा हर एक धर्ममें ऐसा हुआ है, होता है और होता ही रहेगा। और याद रखना कि यह भी बहुत दूरकी बात नहीं है, बल्कि जरा गहराईमें उतरकर जांच करें तो अपने जीवनमें तथा अपने आस पासके बन्धुओंमें भी ऐसे कितने ही दृष्टान्त निकल आवेंगे जिनमें एक ही किसमकी मुख्य शक्तिसे अनेक प्रकारके दुःख मिट गये हैं। यह सुनकर कितने ही भाई बहनोंको आश्चर्य होगा और यह पूछनेका मन करेगा कि क्या ऐसा हो सकता है? क्या यह सच है ? अगर यह बात सच हो तो उसकी कुंजी बतानेकी मेहरबानी करो।

इसके जवाबमें सन्त लोग कहते हैं कि इसमें छिपानेकी कोई बात नहीं है और न इसमें कुछ अजगैब या कठिनाई है। बल्कि यह बिलकुल सीधी सादी बात है , दुनियाके हर एक

धर्मकी मानी हुई बात है और सैकड़ों आदमियोंकी सैकड़ों बार आजमायी हुई बात है। और वह बात यह है कि परम कृपालु परमात्माके शान्तिदायक पवित्र नाममें दुनियाके सब दुःख मिटा देनेका बल है। प्रभुके नामसे दुखियोंको ढारस मिलता है, निराश बने हुओंके मनमें नयी आशा होती है, हारे हुओंको नया बल मिलता है, रास्ता भूले हुओंको प्रभुके नामके बलसे रास्ता मिलता है, जिनके रोग न मिटते हों उनके असाध्य रोग भी प्रभुके नामके बलसे मिट जाते हैं, जो खान्दानी वैर न मिटता हो वह भी प्रभुके शान्तिदायक नामसे मिट जाता है, जो छोटी कहलाने वाली जातिमें पैदा हुए हों वे भी प्रभुके नामके बलसे पूजनीय हो जाते हैं, जो दरिद्रीसे दरिद्री हों उनके पैरोंमें भी प्रभुके पवित्र नामसे लक्ष्मी लोटने लगती है और जो अधमसे अधम हों वे भी प्रभुके पवित्र नामसे पवित्रसे पवित्र हो जाते हैं और गरीब आदमियोंके और किसी तरह न हो सकने लायक लौकिक तो क्या अलौकिक काम भी प्रभुके पवित्र नामके बलसे बन जाते हैं। इसलिये सब तरह के दुःख दूर करना हो तो परम कृपालु पिता परमात्माके पवित्र नामकी महिमा समझ कर उसका सदा स्मरण कीजिये। इससे जो दुःख किसी तरह नहीं मिटता वह दुःख भी आसानीसे मिट जायगा। इसलिये प्रभुका नाम स्मरण कीजिये। स्मरण कीजिये।

२०—फतेह तथा शान्ति हासिल करनेकी सहज कुंजी।

एक भक्तराज महाराज सत्संगमण्डलीमें हमेशा बहुत

नयी नयी बातें करते और सुन्दर ढबसे कथा कहते थे। इससे उनकी कथा सुननेके लिये सैकड़ों आदमी आते थे और हर एक आदमी नया बल, नयी रोशनी, नयी फुर्ती, नया आनन्द तथा नयी शान्ति हासिल कर ले जाता था। क्योंकि वह भक्तराज हमेशा नयी नयी कुंजियां बताया करते थे। एक दिन किसी हरिजनने उनसे कहा कि महाराज! हमको इस दुनियामें फतेह भी चाहिये और शान्ति भी चाहिये। हम अगर फतेह लेने जाते हैं तो शान्ति नहीं मिलती और शान्ति लेने जाते हैं तो इस दुनियामें फतेह नहीं मिलती। तब हमें क्या करना चाहिये? भक्तराजने उत्तर दिया कि मरना नहीं है हमेशा जीना ही है, यह समझ कर काम करो; बस तुम्हारी फतेह है।

यह सुनकर उस जिज्ञासुने कहा कि अगर काम करनेमें इतनी आसक्ति रखें तो फिर शान्ति कहांसे मिले? महाराज! हमें सिर्फ फतेह नहीं चाहिये बल्कि फतेहके साथ शान्ति भी चाहिये, इसलिये शान्ति मिलनेका रास्ता भी बतानेकी कृपा कीजिये।

तब भक्तराजने कहा कि तुम जरा उतावले हो। अभी मैंने एक तरफकी बात कही थी इतनेमें तुम बीचमें ही बोल उठे। पर अब दूसरी तरफकी सुनो तो तुम्हारे मनका समाधान हो जायगा। हमेशा जीना है मरना नहीं, यह समझ कर काम करना जैसे फतेह पानेकी कुंजी है वैसे ही आज ही मरना है और अभी मरना है, यह समझ कर भक्ति करना शान्ति पानेका उपाय है। इसलिये भाई! अगर सच्ची शान्ति दरकार हो तो दुनियादारीमें फतेह पानेके लिये जितने बलसे काम करते हो उतने ही बलसे प्रभुकी भक्ति करो। फिर तो शान्ति कुछ भी दूर नहीं है। पर हम लोगोंसे जो भूल होती है वह यही कि हम या तो व्यवहारमें इतना अधिक ध्यान लगाते हैं और इतनी

अधिक आसक्ति रखते हैं कि प्रभुके सामने आंख उठाकर देखते ही नहीं या बाहरके दिखाऊ वैराग्यमें पड़े रह कर एंमे झूठे झूठे आडम्बरों और ढोंगढकोसलोंमें समय गंवाते हैं कि दुनियाकी कुछ भी परवा नहीं रखते । इस प्रकार सिर्फ एक तरफ कोई एक गट्ठड़ लाद देते हैं पर व्यवहार तथा परमार्थके दोनों पलड़े एक समान रखना हमें नहीं आता । इससे हमें फतेह भी नहीं मिलती और शान्ति भी नहीं मिलती । इसलिये अगर दोनों विषय सुधारना हो तो हमेशा अमर रहना है कभी मरना ही नहीं है, यह समझकर जगतमें काम करो और आज ही मर जाना है यह समझकर ईश्वरकी भक्ति करो । फिर तो फतेह तथा शान्ति तुम्हारी ही है । इसमें शर्त इतनी ही है कि दोनों पलड़े बराबर रखना आवेगा तभी असली लज्जत पा सकोगे । अगर इस तरफ या उस तरफ झुक गये तो समतूलपन खो बैठोगे । और ऐसा होनेपर या तो फतेह नहीं पाओगे या शान्ति नहीं पाओगे । इसलिये ख्याल रखो कि ऐसा न हो । फतेह तथा शान्ति पानेके लिये व्यवहार तथा परमार्थके पलड़े बराबर रखनेकी कोशिश करना । तब फतेह तथा शान्ति पा सकोगे ।

२१-प्रार्थना सफल करनेके उपाय ।

इस जगतमें जो व्यवहारचतुर आदमी हैं वे अपने कामकी फतेहके लिये जगतकी चीजोंपर तथा आसपासके आदमियों पर मुख्य भरोसा रखते हैं। पर जो भक्त होते हैं वे अपनी फतेहका बड़ा भरोसा भगवानकी कृपापर रखते हैं और उसकी कृपा

पानेके लिये प्रार्थना करते हैं । प्रार्थना करनेकी कितनी ही रीतियां हैं । जैसे—

(१) कोई भक्त पुराने समयकी प्रार्थना करता है, उसमें भाषा भी पुरानी ही बर्तता है तथा छंद भी पुराने ही वर्तता है ।

(२) कोई भक्त नये नये छन्दोंमें खड़ी वोलीमें प्रार्थना करता है ।

(३) भगवानकी, पहलेके भक्तोंको दी हुई, मददकी नजीर देकर उसी तरह इस समय अपनी मददके लिये कोई भक्त प्रार्थना करता है ।

(४) कोई भक्त अपनी दीनता तथा अपने अपराध वताकर याचना करता है ।

(५) कोई भक्त अपना दुःख तथा खराब आदमियोंका सुख बताकर जरा उलहना देकर याचना करता है ।

(६) कोई भक्त पुत्रके तौरपर अपना दावा पेश कर तथा यह कहकर कि "पूत कुपूत होता है पर माता कुमाता नहीं होती " अपनी याचना सफल करनेकी प्रार्थना करता है ।

(७) कोई भक्त भगवानको मेहना मारकर तथा तू वड़ा कठोर है, तू बड़ी कड़ी परीक्षा लेता है, तू निर्दयी है इत्यादि पुष्पाञ्जलि देकर फिर अपनी अर्जी सुनाता है ।

(८) कोई भक्त प्रसाद चढ़ाकर तथा किसी किस्मका होम हवन करके फिर प्रभुसे कहता है कि मैंने तुम्हारे लिये यह काम किया अब तू मेरा फलाना काम कर दे । उसकी प्रार्थना इस किस्मकी होती है ।

(९) और कोई कोई भक्त यह कहते हैं कि तूने हमसे वादा किया है इसलिये अपना वचन पूरा कर । तू हमारी नहीं सुनेगा तो फिर दूसरा कौन सुनेगा ? वे इस प्रकार वादे तथा

हककं रूसे मांगते हैं।

ऐसी ऐसी अनेक रीतियोंसे भिन्न भिन्न भक्त प्रार्थना करते हैं; पर अकसर कितने ही भक्तोंकी प्रार्थना जैसी चाहिये वैसी सफल नहीं होती। क्योंकि महात्मा लोग कहते हैं कि प्रार्थना अग्नि है। पर खाली अग्नि काफी नहीं है। अग्निपर जब धूप डाली जाती है तभी उसकी सच्ची सुगन्ध फैलती है और तभी अग्निका पराक्रम दिखाई देता है। परन्तु जबतक अग्निपर धूप न हो तबतक अग्निकी खूबी नहीं दिखाई देती और अग्नि बिना धूपकी खूबी भी नहीं समझ पड़ती। इसलिये प्रार्थनाकी अग्निके साथ एक प्रकारकी कुदरती धूप चाहिये और वह हो तभी प्रार्थना सफल होती है। अब हमें यह जानना चाहिये कि प्रार्थनाकी अग्निमें डालनेके लिये उत्तम धूप क्या है। इसके लिये महात्मा लोग कहते हैं कि—

"परम कृपालु परमात्माका मानपूर्वक शुद्ध अन्तःकरणसे उपकार मानना" प्रार्थनाकी अग्निमें डालने योग्य उत्तम सुगन्धित धूप है। इसलिये अगर प्रार्थना सफल करानेकी इच्छा हो तो उसमें कृतज्ञता की धूप डालनी चाहिये; इससे तुरत ही उसकी सुगन्ध परमात्मातक पहुंच जाती है जिससे प्रार्थना जल्द फलीभूत होती है। क्योंकि ईश्वरका उपकार मानना कुछ छोटी मोटी बात नहीं है; बल्कि जब हृदयमें सन्तोष आ जाता है, जब अपनी कमजोरी ठीक ठीक समझमें आ जाती है, जब प्रभुपर पूरा भरोसा हो जाता है, जब यह विश्वास हो जाता है कि प्रभु जो करता है वह वाजिब ही है, जब संकल्प विकल्प काबूमें आ जाते हैं, जब मौज शौक घट जाते हैं, जब जिन्दगीमें पवित्रता आने लगती है और जब प्रभुके रास्तेमें चलनेकी दृढ़ता आ जाती है तथा कोई छोटा मोटा चमत्कार

जाने बेजाने दिख जाता है तभी उपकार माननेका मन करता है। और जब ये सब बातें होती हैं उसी घड़ी या उसी क्षण शुद्ध अन्तःकरणसे उपकार माना जा सकता है। नहीं तो सिर्फ ऊपरी शब्दोंसे मानेहुए उपकारका कुछ बहुत मोल नहीं है। पर जब ऐसी ऐसी बातोंके साथ अन्तःकरणकी तलहटीसे स्वाभाविक रीतिपर उपकार माना जाय और एकाध बार नहीं बल्कि बारंबार प्रसंगपर तथा बिना प्रसंग भी उपकार माना जाय तभी प्रार्थना सफल होती है। इसलिये भाइयो ! अगर आपको अपनी प्रार्थना सफल करानी हो तो प्रार्थनाकी अग्निमें कृतज्ञताकी धूप डालना सीखिये । उपकार माननेकी धप डालना सीखिये ।

२२—खुले खजाने परमार्थ करनेका बल हासिल करनेका उपाय। आपके हाथमें अगर थोड़ा हो तो उसके सामने मत देखिये, बल्कि प्रभुकी पूर्णताके सामने देखिये; फिर तो आप जी खोल कर परमार्थ कर सकेंगे।

कितने ही हरिजनोंका दान धर्म करनेका बड़ा मन करता है; क्योंकि जो सच्चे भक्त होते हैं उनका स्वभाव बड़ा लहरी होता है। इसका कारण यह है कि जगतकी वस्तुओंका मोह उन्हें बहुत थोड़ा होता है, इससे ऐसी चीजोंको वे बेफिकरीसे फेंक सकते हैं। दूसरे उनको इस बातका भी भरोसा रहता है कि हम जो देते हैं वह प्रभुके लिये देते हैं और प्रभुके लिये दिया हुआ कभी व्यर्थ नहीं जाता। इसके सिवा वे शास्त्रके इस सिद्धान्तको भी मानते हैं कि संन्यास लिये

बिना मोक्ष नहीं मिलता अर्थात् मनसे सब वस्तुओंका पूरा पूरा त्याग किये बिना मुक्ति नहीं मिलती। इससे वे मामूली व्यवहारी आदमियोंसे अधिक दान पुण्य कर सकते हैं। तिसपर भी कितने ही भक्तोंके मनमें यह असन्तोष रहता है कि हम अभी कुछ नहीं कर सकते और सचमुच ऐसा ही होता है। उनके हाथमें जो थोड़ा बहुत होता है उसके सामने नजर रखकर वे दान करते हैं, इससे अपने मनके सन्तोष लायक नहीं दे सकते। क्योंकि थोड़ेमेंसे थोड़ा ही दिया जा सकता है। अगर कुएंमें ही जल न हो तो फिर डोलमें कहांसे आ सकता है? वैसे ही जिसके हाथमें थोड़ा ही हो वह दूसरोंको ज्यादा कहांसे दे सकता है? और जबतक ज्यादा न दे तबतक हृदयका सन्तोष तथा सच्चा आनन्द कहांसे मिल सकता है? नहीं मिल सकता। तब करना क्या चाहिये? अपने पास बहुत थोड़ा है और देना है बहुत; यह कैसे हो सकता है? और अगर ऐसा न हो तो फिर भक्तोंकी भक्ति क्या? और प्रभुकी महिमा क्या? क्योंकि प्रभुका कौल है कि भक्तोंको उनके कल्याणके लिये जिन चीजोंकी जरूरत पड़े उन्हें देनेको मैं बाध्य हूं। इससे परमार्थके काम करनेके लिये भक्तोंको जिस सामग्रीकी जरूरत होती है उसे प्रभु जुटा देता है। तौभी कितने ही भक्तोंको कितनी ही चीजोंकी तंगी पड़ती है; इसका क्या कारण है? इसके जवाबमें आगे बढ़ेहुए भक्त कहते हैं कि हम अपने हाथमें, घरमें या गांवमें जो थोड़ा सा होता है उसके सामने देखा करते हैं इससे अधिक नहीं दे सकते। अगर हम अपने सामने देखनेके बदले अपने प्रभुकी पूर्णताके सामने देखना सीखें तो हम खूब जी खोलकर दे सकते हैं। क्योंकि प्रभुकी पूर्णताके सामने देखनेसे हमें विश्वास हो जाता है कि उसके यहां किसी

बानकी कमी नहीं है। वह सर्वशक्तिमान है, वह जो चाहे सो कर सकता है, वह थोड़ेसे बहुत बना सकता है, वह तृणसे पहाड़ कर सकता है, वह धूलसे सोना बना सकता है और जहां कुछ भी नहीं है वहां भी वह जो चाहे सो कर सकता है। उसके यहां असम्भव शब्द ही नहीं है। इसके सिवा वह सब तरहकी अपूर्णताको पूर्ण करनेवाला है। इसलिये अगर उसकी पूर्णताकी तरफ देखना आवे तो ऐसा देखनेवाले भक्तको किसी तरहका अभाव कभी नहीं होता। पर जो अपने हाथमें है उसके सामने देखनेवालेको जरूर अभाव होगा। इसलिये अगर खूब आगे बढ़ना हो और ठीक ठीक परमार्थ करना हो तो आपके हाथमें या आपके घरमें जो थोड़ा बहुत हो उसकी तरफ मत देखिये, बल्कि परम कृपालु परमात्माकी पूर्णताके सामने देखिये। इससे आपमें नया बल आ जायगा और दूसरे व्यवहारी आदमियों से आप कहीं अधिक परमार्थ कर सकेंगे।

२३-हम धर्मसम्बन्धी अपनी कितनी ही प्रतिज्ञाओंको नहीं पाल सकते ; इसका कारण।

जिन आदमियोंको भक्त बनना है उन्हें अपने भीतरका चक्र थोड़ा बहुत बदलना पड़ता है। क्योंकि जीव जबतक मायावादी संसारी रहते हैं तबतक उनके आचार विचार और रहन सहन और तरहकी होती है ; पर जब भक्त बनने लगते हैं तब उनको अपनी रीति भांति और रहन सहन बदलनी पड़ती है। लेकिन आदमीका स्वभाव ऐसा है कि उसको जो लत पड़ जाती है वह तुरत नहीं छूटती, उसके मनमें जो पुरानी लकीर पड़ जाती है वह क्षणभरमें नहीं मिटती और अच्छी या बुरी जैसी उसकी प्रकृति बंध जाती है वह एकदम नहीं बदलती ; परन्तु धीरे धीरे उसका परिवर्त्तन होता है, एक एक करके

होता है और बहुत कुछ शारीरिक तथा मानसिक लड़ाई करनेके बाद होता है। ऐसी लड़ाईके वक्त एक रास्तेसे दूसरे रास्तेपर जानेके लिये कितनी ही वार मनमें कितनी ही प्रतिज्ञाएं करनी पड़ती हैं। पर कितने ही हरिजनोंपर वारंवार ऐसी बीतती है कि वे अपनी की हुई प्रतिज्ञाको अन्ततक कायम नहीं रख सकते; बीच बीचमें उनकी प्रतिज्ञा टूट जाती है। यह देखकर उनके मित्र दिल्लगी उड़ाते हैं और उन हरिजनोंमें कुछ अधिक हया हो तो उन्हें भी अपनी इस कमजोरीके लिये अफसोस होता है और यह विचार उठता है कि हम जो अपनी प्रतिज्ञा नहीं पाल सकते इसका क्या कारण है?

इसके जवाबमें महात्मा लोग कहते हैं कि ऐसे नौसिख भक्त-कच्चे भक्त जो प्रतिज्ञा करते हैं वह प्रभुकी इच्छानुसार नहीं करते, बल्कि और ही तरहसे करते हैं। जैसे—

(१) अपने जोशमें आकर प्रतिज्ञा करते हैं।

(२) जरूरी फेर वदल करनेके लिये जो धीरज रखना चाहिये वह धीरज रखे बिना उतावले होकर प्रतिज्ञा करते हैं।

(३) देश कालको सोचे विना तथा अपनी हालत और शक्तिका विचार किये बिना प्रतिज्ञा करते हैं।

(४) अपने इर्द गिर्दका संयोग जांचे बिना प्रतिज्ञा करते हैं।

(५) अपनेसे जितना हो सकता है उससे कहीं अधिक कर डालनेकी आशा रखकर प्रतिज्ञा करते हैं।

(६) मान मर्यादाकी इच्छासे, दूसरोंसे आगे बढ़ जानेके लिये तथा जल्द जल्द बड़े बड़े फल पा जानेके लिये प्रतिज्ञा करते हैं।

(७) प्रेमसे नहीं, ज्ञानसे नहीं, कर्त्तव्यके लिये नहीं और प्रभुकी महिमा समझकर नहीं, बल्कि सिर्फ बाहरकी जड़ जिदके लिये प्रतिज्ञा करते हैं। इससे वह प्रतिज्ञा अक्सर नहीं निभती।

भाइयो ! इस किस्मकी प्रतिज्ञा न निभे तो क्या कुछ आश्चर्य-की बात है ? नहीं । इसवास्ते अगर आगे बढ़नेके लिये प्रतिज्ञा करनी हो तो परम कृपालु परमात्माको हाजिर नाजिर जानकर उसकी इच्छानुसार प्रतिज्ञा करनी चाहिये । इस तरह प्रतिज्ञा करना आवे तो वह प्रतिज्ञा अन्ततक निभ सकती है । इसलिये भाइयो । ऊपर लिखे मुताबिक बहुत सोच विचारकर क्रम क्रमसे पालने योग्य प्रतिज्ञा कीजिये, आत्माका बल समझकर प्रतिज्ञा कीजिये और ऐसी प्रार्थना कीजिये कि प्रतिज्ञा पालनेके लिये परम कृपालु परमात्मा बल दे । इससे धीरे धीरे धर्मकी शुभ प्रतिज्ञा आसानीसे पाली जा सकेगी ।

२४—थोड़े समयतक प्रभुकी इच्छानुसार चलना काफी नहीं है, बल्कि हमेशा उसकी इच्छानुसार चलना चाहिये ।

कुछ भक्त यह कहते हैं कि पहले हम बहुत काम कर चुके हैं परन्तु अब हमसे नहीं होता ; इससे तुम समझते हो कि हम कुछ नहीं करते, परन्तु हमने अपनी जवानीमें जैसा धर्म पाला है वैसा आज कोई पाल तो ले ! उस समय हम कितने व्रत उपवास करते थे तीर्थ करनेके लिये कितने कोस पैदल चलते थे और कैसे निस्पृह भावसे रहते थे यह तुम सुनो तो तुम्हें आश्चर्य हुए विना न रहे । और तो क्या उस समय लंगोटीकी भी परवा न थी । यह सब जंजाल तो अब हुआ है, नहीं तो पहले कितने ही सेठ साहूकार तथा कोई कोई राजा भी हमारे पास आ कर रुपयों की थैली रखते पर हम आंख उठाकर उनके सामने देखते भी नहीं थे । आज तुम्हारे सामने कुआं खुदवाने या गायके चारेके लिये चन्देकी सूची रखते है तो तुम मुंह बनाते हो और

कहते हो कि " महाराज लालची है " पर बेटा ! हमारे समान निर्लोभी दूसरा कौन है ?

हमें फलानी जगह बड़े महन्तकी गद्दी मिलती थी पर हमने नहीं ली। क्योंकि उस समय वही रंग था और आज आटेकी गठरी बांधे फिरते हैं इससे तुम समझते हो कि महाराजमें कुछ तत्त्व नहीं है। पर बच्चा ! महाराज तो पहले ही बहुत कर चुके है। अब इस मन्दिरकी उपाधि लगी है इससे और कुछ नहीं बनता। पर पहले धर्म ध्यान करनेमें हमने कुछ उठा नहीं रखा।

भाइयो ! कितने ही साधु, भक्त तथा हरिजन ऐसी ऐसी बातें किया करते हैं और प्रभुकी कृपासे कुछ समय जो कोई सद्गुण चमक गया हो उसीके बलपर रहा करते हैं तथा कुछ खास अनुकूलताके कारण कुछ समय भगवदिच्छाके अनुसार चले हों तो उसपर जोर दिया करते हैं। पर ईश्वरी रास्तेमें आगे बढ़ेहुए ज्ञानी कहते हैं कि इतना ही कर देना बस नहीं है, कुछ देर भगवदिच्छाके अनुसार चलना या कुछ समय प्रभुकी रस्सी पकड़कर जाना ही बस नहीं है। अनुकूल संयोगोंके कारण किसी समय किसी आदमीमें दया, परमार्थ, दान, त्याग, तप या ऐसे ही किसी दूसरे गुणका बढ़ जाना और पीछे संयोगोंके बदलनेसे उस सद्गुणका घट जाना सम्भव है। परन्तु इस थोड़ी देरके सद्गुणके लिये पीछेसे अभिमान करना वाजिब नहीं है। फिर यह बात भी समझ लेने योग्य है कि हमने कल भोजन किया है तो उससे आज नहीं चल सकता। कल भोजन करचुके होनेपर भी आज फिर जीमना पड़ता है। वैसे ही पहले धर्म कर चुकना ही बस नहीं है, बल्कि अब भी, आजकलके संयोगोंके अनुसार धर्मके शुभ काम करना चाहिये। इसी प्रकार कुछ समय प्रभुकी इच्छानुसार चल देना ही बस नहीं

है बल्कि जिन्दगीके आखिरी दमतक प्रभुकी इच्छानुसार चलना चाहिये। तभी सच्चा धर्म पालन समझा जाता है और तभी प्रभु प्रसन्न होता है। इसलिये पहले कुछ समयतक कियेहुए शुभ कर्मके अभिमानमें मत रहिये। बल्कि अगर सच्चा भक्त बनना हो और मोक्ष पाना हो तो जिन्दगीकी आखिरी सांसतक प्रभुकी रस्सी पकडकर चलिये और उसीकी इच्छानुसार चलाकी कीजिये।

२५—बहुत करके हमेशा दुःखके बाद सुख ही होता है; पर हम उस सुखको पहलेसे देख नहीं सकते और दुःखको नजरके सामने देखते हैं, इससे दुःखके वक्त हमें अधिक अफसोस होता है।

भाइयो! कुदरतका यह एक बड़ा कानून समझ रखना कि जब दुःख आता है तब उसके बाद कुछ न कुछ सुख आने-वाला होता है। पर उस सुखके आनेमें थोड़ा समय लगता है; दूसरे दुःख हमारे सामने ही खडा दिखाई देता है और उसका कुछ असर भोगना भी पड़ता है। और सुख भविष्यके भीतर होता है और उसके सामने समयका परदा रहता है। इससे उस समय सुखको हम नहीं देख सकते। सिर्फ दुःख हमारे सामने दिखाई देता है जिससे हमको अफसोस होता है। परन्तु ज्ञानी लोग कहते है कि ऐसे झूठे अफसोसमें हमें नहीं पडे रहना चाहिये; क्योंकि भविष्यमें अधिक सुख मिले इसके लिये ही दुःख दिया जाता है। इसके लिये एक भक्तराज कहते थे कि—

एक बड़े पुराने बटवृक्षके नीचे एक आमका छोटा सा पौधा उगा था। उस पौधेको देखकर एक आदमी यह समझता था कि उस बड़की छायासे ही आमके पौधकी रक्षा होती है। अगर इस

आमके पौध पर ऐसी छायावाला बड़ न होता तो यह पौधा धूप पालेसे कभीको सूख गया होता या इसको कोई पशु चर गया होता। परन्तु बड़के आश्रयमें ही वह आजतक बचा हुआ है। यह सोच कर वह बडका एहसान माना करता था। इसके बाद एक बार चौमासेमें बड़ा भारी तूफान आया जिससे वह बड़का पेड़ उखड़ गया। यह देख कर वह आदमी बहुत अफसोस करने लगा कि हाय! हाय! अब आमके पौधेकी क्या दशा होगी! अब वह थोड़े दिनमें सूख जायगा। इस खटकेसे उसको खेद होने लगा। परन्तु कुछ दिनमें उसने देखा कि बड़के उखड़ जानेसे आमका पौधा तेजीसे बढ़ता और फैलता जाता है और उसमें शाखपत्ते अधिक निकलते जाते हैं तथा उसमें एक प्रकारकी तेजी आगयी है। यह देख कर उस आदमीने अपने एक चतुर मित्रसे इसका जिक्र किया कि मैं समझता था कि बड़के उखड़ जानेसे और उसकी छाया मिट जानेसे आमका पौधा सूख जायगा, पर वह तो और अधिक खिलता जाता है। इसका क्या कारण है?

यह सुनकर उस चतुर मित्रने कहा कि भाई! जब तक यह पौधा छोटा था और इसे छायाकी जरूरत थी तबतक कुदरतने इस पर बड़की छाया रहने दी; पर जब यह पौधा बड़ा हुआ और इसे अधिक हवा तथा रोशनीकी जरूरत पड़ी तब इसको यह खुराक देनेके लिये कुदरतने बड़को वहांसे हटा दिया। इस कारण बड़को उखाड़ कर कुदरतने आमके पौधेका नुकसान नहीं किया बल्कि और उसका भला ही किया है। अब अगर वहां बड़का पेड़ रहता तो यह आमका पौधा बढ़ न सकता; क्योंकि इसे जिस हवाकी जरूरत थी, जिस रोशनीकी जरूरत थी, सूर्यकी जिस धूपकी जरूरत थी और

चन्द्रमाकी जिस चांदनीकी जरूरत थी वह उस बड़की छायामें उसे नहीं मिल सकती थी और जब तक ये सब तत्त्व न मिलते, यह सब 'सामान न मिलता तब तक आमका पौधा असली तेजीसे न बढ़ सकता और न पूरा पूरा फल दे सकता था। सो आमको बढ़ानेके लिये ही कुदरतने बड़को हटा दिया है।

इसलिये याद रखना कि आमके पौधेको दुःख देनेके लिये नहीं, बल्कि सुखी करनेके लिये ही कुदरत ने बड़को गिरा दिया है। इसी तरह देखो कि जबतक नानकचन्दजी दीवान थे तबतक हमारे देवीदयाल उनको पान लगा लगा कर खिलानेमें ही रह गये थे। पर जब वह दीवान गये और उनकी जगह नये दीवान आये और राज्यमें सब फेर बदल हुआ तब देवीदयालकी कदर हुई। आज कल वह अच्छे दरजे पर हैं और भविष्यमें उन्हींके दीवान होनेकी आशा की जाती है। अब विचार करो कि अगर पहलेके दीवान ही आजतक रहते तो क्या देवीदयालको ऐसा चान्स मिलता? लेकिन जब वह दीवान गये तब देवीदयालको कितना अफसोस हुआ था, यह तुम जानते ही हो, भाई! सब ऐसा ही है। दुःखके पीछे सुख होता ही है और सुखके लिये ही दुःख होता है। इसलिये हमें दुःखसे दब नहीं जाना चाहिये या न हिम्मत हारनी चाहिये। हीरालाल वकीलकी बात याद है कि नहीं? उनका भी ऐसा ही हुआ था।

हीरालाल पहले मास्टरी करते थे, पर जरा अक्खड़ मिजाजके थे। इससे बाला अफसरसे छोटी सी बातपर खटक गयी। मामला बढ़ गया। बाला अफसर भी तीसमारखां ही था, उसने रजसे गज करके हीरालालको स्कूलकी नौकरी से छुड़ा दिया। इसके बाद हीरालाल वकालत पढ़ने लगे और दो वर्षमें वह स्टेटकी वकालतकी परीक्षामें पास हो गये।

उस समय और कोई अच्छा वकील न था और हीरालाल जरा वाचाल, सिफारिश वाले और जहां तहां घुस जानेवाले थे। इससे उनकी चल गयी और उन्होंने खूब धन पैदा किया। आज उनके पास दो लाख रुपये हैं। अब वह कहते हैं कि अगर मै मास्टरीकी नौकरीमें बारह रुपयेकी तलब पर पड़ा रहता तो आज क्या इतने रुपयेवाला हो सकता? मास्टरीमें बढते बढते बहुत होता तो तीस चालीस रुपये वेतन मिलता और कभी इंस्पेक्टर होता तो पचास, साठ या सत्तर रुपये मिलते, उसमें कुछ हजारों रुपये न मिलते। मास्टरीकी नौकरी गयी तभी मुझे वकालत सीखनेकी सूझी। अगर वह नौकरी कायम रहती तो उसे छोड़ देनेको मेरा कभी इरादा न होता। क्योंकि उस समय मैं यह समझता था कि मास्टरीकी नौकरीमें बड़ी बादशाही है। किसीकी परवा नहीं, सब लड़के ताबेदार और सालमें दो तीन दिन बाला अफसरको मुंह दिखा आना, फिर सालभर मौज करना और गांवमें सबसे चतुर कहलाना: इससे बढकर मजा क्या है? इस प्रकारका विचार होनेके कारण मैं कभी अपनी खुशीसे मास्टरीकी नौकरी न छोड़ता। पर जब छुड़ा दिया गया तब लाचारीसे नौकरी छोड़नी पड़ी। तो भी मुझे वह नौकरी छोड़ते वक्त बड़ा अफसोस हुआ था और मैं समझता था कि मौकूफ होनेसे मेरी इज्जत गयी। परन्तु उससे आज मेरा नसीब कैसा फिर गया है यह जब देखता हूं तब मुझे आश्चर्य होता है और यह ख्याल होता है कि परम कृपालु परमात्मा हम लोगोंपर किस तरह दया करता है यह हम नहीं जान सकते इसीसे बड़बड़ाया करते हैं। पर अगर यह समझें कि दुःखमें उसकी दया ही होती है तो फिर हमें दुःखके वक्त आज कलके बराबर अफसोस न हो। हीरालालके मुंहसे उनकी

यह बात सुननेमें मुझे बड़ा आनन्द मिलता है।

भाई! ऐसे कितने ही मामले दुनियामें हुआ करते हैं। नरसिंह मेहताका ही उदाहरण लो। उनको उनकी भाभीने मेहना मार मार कर तथा दुःख देकर घरसे निकाल दिया था इससे उनको भक्ति करनेकी सूझी और आगे जाकर वह महान भक्त हुए। अगर उनकी भौजाई मेहना मार कर उनको घरसे न निकाल देती तो उनकी क्या हालत होती यह एक विचारने योग्य मुश्किल सवाल हैं। भौजाईने जब घर छुड़ाया उस समय उनको कितना क्लेश हुआ होगा यह विचारना कुछ मुश्किल नहीं है और जब उनको भगवानके दर्शन हुए होंगे तब उनको कैसा अलौकिक आनन्द हुआ होगा यह विचारना भी कुछ मुश्किल नहीं है। बंधु! दुःखसे आगे जाकर ऐसे प्रसङ्ग निकल आते हैं पर अगर अकेला सुख ही हो तो मनुष्य आगे न बढ़सके।

मेरे काकाका दृष्टान्त भी जानने योग्य है। उनको व्यापारमें घाटा लगा और रोजगार टूट गया तो उन्होंने अपने एक दोस्तकी मददसे खांड़ बनानेका एक कारखाना खोला। वह कारखाना पहले छोटी हैसियतमें था पर आजकल उसमें हजारों टन खांड़ बनती है और वह लाखों रुपये कमाते हैं। अगर वह उस छोटीसी दुकानमें आजतक लगे रहते और खा पीकर दो चार सौ रुपये साल बचा लेनेके बराबर और कोई सुख न समझ कर उसी दशामें पड़े रहते तो आज क्या ऐसी ऊंची दशामें होते? तिसपर भी जिस वक्त रोजगारमें घाटा लगा और दुकान तोड़नी पड़ी उस समयकी उनकी हालत जिसने देखी थी और उनकी हाय हाय जिसने सुनी थी उसे अफसोस हुए बिना न रहा। परन्तु आज जब वह अपनी दशाकी और देखते हैं तथा खांड़का नया कारबार देशमें बढ़ानेके लिये चारों ओरसे

अपनी इज्जत होते देखते हैं तब वह ईश्वरका उपकार मानते हैं और कहते हैं कि उसने अच्छा किया जो मेरी दुकानमें घाटा लगाया। अगर मेरी दुकानमें घाटा न लगाया होता तो आज मेरी ऐसी अच्छी दशा न होती । इसलिये अब मेरी समझमें आया है कि दुःखमें भी आनन्द है, पर उसे समझना और आनन्द लेना जाना चाहिये।

सूबेदार रामप्रसादको जानतेहो? वह सोनेके तीन तमगे लटकाये फिरते हैं और घर बैठे चालीस रुपये पेंशन खाते हैं। वह कहते हैं कि मैं पहले, जवानीके वक्त दूध बेचनेका रोजगार करता था। मेरे पास चार भैंसें थीं उन्हींसे मेरे गुजारा होता था। पर एक साल भैंसोंमें रोग फैला जिससे मेरी सब भैंसें मर गयीं। उस समय मेरे पास कुछ भी न था। थोड़े बहुत रुपये जमा किये थे वे जवानीके जोशमें दूसरा ब्याह करने तथा एक मित्रसे तकरार हो जानेपर मुकद्दमा लड़नेमें खर्च होगये। इससे मेरे पास फूटी कौड़ी भी न थी । लाचारी दरजे ग्वालेका रोजगार छूटनेपर एक मित्रकी मददसे मैं पलटनमें रंगरूटके तौरपर भरती हुआ। कुछ दिन बाद बारह रुपये तलबपर पलटनमें नौकरी मिली । इसके बाद लड़ाई छिड़ी जहां मेरी टुकड़ीको जाना पड़ा । उसमें बहादुरी दिखानेका मौका मिलनेपर मेरी तलब बढ़ी और मुझे हवलदारकी जगह मिली। इसतरह मौके मौकेपर बहादुरी और फरमा-बरदारी दिखानेसे मैं जमादार और फिर सुबेदार हो गया। अब घरपर बैठकर पेंशन खाता हूं। अगर मेरी भैंसें न मर जातीं तो मैं आजतक दूध बेचनेवाला ही रहजाता, सिरपर दूधका मटका लेकर गली गली घूमा करता और भैंसोंका गोबर उठाया करता तथा गोहालमें झाड़ू दिया करता। पर इसके बदले आज जगह

जगह मेरी इज्जत होती है, सरकारी जलसोंमें मुझे बुलावा आता है तथा मैं सोनेके तमगे पहनता हूं और बैठे बैठे पेंशन खाता हूं। यह सब भैंसोंके रोगसे मर जानेका प्रताप है। इसके लिये मुझे उस समय इतना अफसोस हुआ था कि जिसका ठिकाना नहीं। पर आज उस दुःखके लिये मैं ईश्वरका उपकार मानता हूं। क्योंकि अगर वह दुःख मुझपर न पड़ता तो मुझे पलटनमें नौकरी करनेकी न सूझती। लेकिन कुदरतको यह पसन्द नहीं था कि मेरे जैसा पलटनिया आदमी दूध बेचनेके रोजगारमें पड़ा रहे। इससे उसने मुझे आगे ठेलनेके लिये तथा मुझसे यह रोजगार छुड़ानेके लिये ही भैंसोंका नाश किया। मुझे तो ऐसा ही जान पड़ता है। इस प्रकार दुःखसे भी सुख हो जाता है, इसलिये यह सिद्धान्त समझने लायक है।

हमारे डाक्टर मामा कहते थे कि मैं अपनी जवानीमें बड़ा खराब चालका आदमी था। उससमय मुझे एक लुच्चा मित्र मिल गया था इससे मैंने बहुत कुछ शोहदापन किया था। इसके बाद किसी छोटी सी बातके लिये विरुद्ध पक्षके बहकाने तथा घूस देनेसे वह यार फूट गया और उसने मेरा सारा भंडाफोड़ कर दिया। इससे उस समय मैं बहुत बेइज्जत हुआ और मेरी चारों ओरसे थुका फजीहती हुई। उस समय उस दुश्मन बने हुए मित्रपर मुझे बड़ा गुस्सा आया और जीमें यह आता था कि इसका भर्ता निकाल डालूं। चार छः महीने जेलकी मिट्टी काटनी पड़े तोभी कुछ चिन्ता नहीं पर इसको दुनियामें निकम्मा ही बना दूं तो ठीक। ऐसे ऐसे बुरे विचार जीमें आते थे। परन्तु इसके बाद एक नेक मित्रके उद्योगसे मुझे दूसरे स्थानकी नौकरी मिल गयी जिससे मैं तुरत वहां चला गया। वह बात ठंढी पड़ गयी। वहां जाकर मैं अपने काममें चित्त लगाने लगा और

फुर्सतके वक्त डाक्टरीका अभ्यास करने लगा। इससे मेरे विचार सुधरते गये। इस प्रकार विचार सुधरने और काममें जी लगनेका एक यह कारण भी था कि अपने गांवमें लुचे मित्रकी सोहवतमें मैंने बड़ी भारी बदनामी उठायी थी और सब जगहसेमें छी छी थू थू हुआ था; यह बात मुझे बहुत अखरी थी और यह भी विश्वास होगया था कि लुचपनमें कुछ तत्त्व नहीं है, सुचालमें ही बरकत है। यह समझ हो जानेसे मैं अपने काममें तथा अध्ययनमें लगा रहा। इससे आज मैंने दस रुपये भी पैदा किये हैं, इज्जत आबरू भी हासिल की है और परिवारका भी सुख है। इस प्रकार सब तरफसे चैन है। अगर उस गुंडे मित्रने मेरा भंडा न फोड़ा होता और मुझे हैरान न किया होता तो मैं गुंडईमें ही पड़ा रह जाता और कभी इतना सुधर न सकता; परन्तु जब मेरे ऊपर दुःखके कोड़े लगे तभी मैं सुधरा हूं। इसलिये मेरा तो यह ख्याल है कि हमें चेतानेके लिये तथा सुधारनेके लिये हमपर जो दुःख आपड़े उस दुःखका भी हमें उपकार मानना चाहिये और उस दुःखमें भी प्रभुकी दया समझनी चाहिये। ऐसा करना आवे तो बड़ेसे बड़े दुःख भी आशीर्वाद समान हो जाते हैं।

राधेश्याम कहते थे कि मैं बड़ा शौकीन आदमी था और बड़ा अहंकारी तथा व्यभिचारी था। ये सब दुर्गुण मुझमें इस तरह जड पकड़ बैठे थे कि किसी तरह उनके दूर होनेकी आशा न थी। मैं अच्छे अच्छे आदमियोंमें बैठता उठता था और मेरी आमदनी भी अच्छी थी तथा मेरा ज्ञान भी अच्छा था। इससे मैं समझता था कि व्यभिचार, अभिमान, आडम्बर और बेहद मौजशौक बहुत खराब हैं और मुझे अपने इन सब दुर्गुणोंको घटाना चाहिये। किन्तु हजार चेष्टा करनेपर भी मैं उनको घटा नहीं सकता था।

इस विषयमे मुझपर सत्सङ्गका असर भी कुछ नहीं होता था और कोई हितमित्र प्रसङ्गवश मुझे कुछ कह सुन देते थे तो उसका असर भी नहीं पडता था। मेरी नेक स्त्री मुझे कुछ समझाती तो मै मिजाजमे आकर उसका भी दुतकार देता थी। इस कारण मेरे सुधरनेकी उस समय कुछ भी आशा न थी। परन्तु इस बीचमे मेरी इकलौती लडकी विधवा हो गयी। उस समय मेरे मनपर ऐसा भारी धक्का लगा कि मेरी सारी शौकीनी उड गयी मेरा अभिमान जाता रहा और मेरी व्यभिचारकी इच्छाए मिट गयी। जबसे लडकी राँड हुई तबसे मै घरपर ही रहने लगा और उसीका विचार करने लगा कि कैसे इसका भला हो और यह कैसे ज्ञानके रास्तेमें पहुचायी जाय। विचारके साथ मे वैसा ही उद्योग भी करने लगा। इससे मेरी लडकी बहुत पवित्र तथा अनुकरण करने योग्य जि दगी बिताने लगी और मै भी धीरे धीरे सच्चा भक्त हो गया। इस प्रकार मै अपनी लडकीके विधवा होनेसे भक्त हुआ। अगर यह चोट मेरे न लगती तो और किसी तरह मै कभी सुधर न सकता। प्रभु किस रास्ते हमको सुधारता है तथा किस रास्ते हमारी मदद करता है यह हम नहीं जानते इससे हम अपने ऊपर दु ख पडते देखकर झीखा करते है, पर अगर दु खका उद्देश्य समझे तो हमें यही जान पडेगा कि हमपर पडनेवाला दु ख भी एक प्रकारका ईश्वरका महान उपकार है। क्योंकि जो काम और किसी तरह नहीं हो सकता वह काम दु खकी मददसे हो जाता है। इस लिये मुझे तो यही मालूम होता है कि दु खमें भी ईश्वरका आशीर्वाद है। सो भाइयो और बहनो! दु खमे भी कुछ खूबी समझना सीखिये। दु खमे भी कुछ खूबी समझना सीखिये।